वर्ष 2, अंक 1
जनवरी - मार्च 2022

RNI दिल्ली द्वारा सत्यापित शीर्षक कोड - UPHIN49954
सहयोग राशि : ₹ 60.00

आंबेडकरवादी साहित्य

बहुजन हिताय बहुजन सुखाय लोकानुकम्पाय के दर्शन
पर आधारित त्रैमासिक पत्रिका

संतकवि रविदास का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

समस्त देशवासियों को संत शिरोमणि गुरु रविदास जयन्ती की हार्दिक बधाई एवं मंगल कामनाएँ।

श्यामलाल राही 'प्रियदर्शी'

वरिष्ठ साहित्यकार, बरेली (उ.प्र.)
सम्पर्क - 9456045567

डॉ. आर. एम. राव 'मनोहर'

प्रबंधक शिवदुलारी मेमोरियल विश्वेश्वर प्रसाद उच्चतर माध्यमिक विद्यालय
अम्बेडकर ग्राम चक इटैली, हथगांव, आगा, फतेहपुर, उ.प्र.
सम्पर्क - 7060240326

डॉ. बी. आर. बुद्धप्रिय

(आंबेडकरवादी साहित्यकार, चिंतक एवं समाजसेवी)
बरेली, उ.प्र.
सम्पर्क - 9412318482

रघुवीर सिंह नाहर

(आंबेडकरवादी कवि)
अलवर, राजस्थान
सम्पर्क - 9413058580

राधेश विकास

ग्रामीण प्रवक्ता
हनुमानगंज, देवरिया, प्रयागराज
सम्पर्क - 9956824322

आनन्द कुमार सुमन

(आंबेडकरवादी कवि)
सिद्धार्थ नगर, उ.प्र.
सम्पर्क - 9838909065

संरक्षक

डॉ0 आर0एम0 राव 'मनोहर', बरेली
श्यामलाल राही 'प्रियदर्शी', बरेली
रघुवीर सिंह 'नाहर', राजस्थान

संपादक

देवचंद्र भारती 'प्रखर'

मो.- 9454199538
ambedkarvadisahitya@gmail.com

संपादक मंडल

डॉ0 बी0 आर0 बुद्धप्रिय, बरेली
डॉ0 मुकुन्द रविदास, धनबाद
भूपसिंह भारती, हरियाणा
आनंद कुमार 'सुमन', सिद्धार्थ नगर
राधेश विकास, प्रयागराज

संपादकीय कार्यालय

शी 19/100, भीम नगर कालोनी
सनबीम वरुणा के पास, कचहरी
वाराणसी (उ.प्र.) 221002

इस पत्रिका में प्रकाशित लेखकों के मत से संपादक या प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है। किन्तु प्रकाशित लेखों पर यदि किसी को कोई आपत्ति हो, तो अपनी प्रतिक्रिया भेज सकते हैं। सभी सम्बन्धित पदाधिकारी अवैतनिक हैं। किसी भी विवाद की स्थिति में वाराणसी न्यायालय ही मान्य होगा।

स्वामी एवं प्रकाशक देवचंद्र भारती 'प्रखर' द्वारा गौतम प्रिंटर्स, सी.27/111-बी, जगतगंज, वाराणसी (उ.प्र.)-221002 से प्रकाशित किया।

आंबेडकरवादी साहित्य

बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय, लोकानुकम्पाय के दर्शन पर आधारित त्रैमासिक पत्रिका

वर्ष-2, अंक-1, जनवरी-मार्च 2022

संपादकीय :

गुरु रविदास जी के जीवन-चरित्र से संबंधित भ्रांतियों का निवारण। /04

विचार :

'गोल' के अध्यक्ष की कलम से .... 'शील की महत्ता' / 11

आलेख :

बौद्ध परम्परा के बोधिसत्व स्वरुप हैं- सद्गुरु रैदास
डॉ. बी.आर. बुद्धप्रिय / 13-20
ऐसा चाहूँ राज मैं... बेगमपुरा की संकल्पना
भूप सिंह भारती / 21-24
संतन में संत रविदासा- डॉ. मुकुन्द रविदास / 25-27
गुरु रविदास की क्रांतिकारी वाणी और उसकी प्रतिक्रिया
सतनाम सिंह / 28-32
संत रविदास के काव्य में बौद्ध चिंतन
देवचंद्र भारती 'प्रखर' / 33-36
गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित गुरु रविदास वाणी
डॉ. चमन लाल / 37-39

कविताएँ एवं ग़ज़लें :

देवचंद्र भारती 'प्रखर', राम मनोहर राव, एस0एन0 प्रसाद, सूरजपाल, एल0एन0 सुधाकर, रूप सिंह 'रूप', / 40-50

कहानी :

पुजारी- देवचंद्र भारती 'प्रखर' / 51-55

पुस्तक समीक्षा :

लोक-चेतना के दोहों का अतुलनीय संग्रह है- 'नाहर-सतसई'
प्रोफेसर तारा राम गौतम / 56-59

रिपोर्ट :

राजस्थान के मंत्री टीकाराम जूली ने 'नाहर-सतसई'..... / 60-61
गुरु विश्राम वृद्ध-आश्रम... बुजुर्गों का अपना घर / 62-63

संपादक के नाम पत्र

'आंबेडकरवादी गीतकार एवं गायक विशेषांक' एक ऐतिहासिक दस्तावेज़ है।

प्रिय, आयुष्यमान देवचंद्र भारती 'प्रखर' जी! नमो बुद्धाय जयभीम! आंबेडकरवादी साहित्य' त्रैमासिक पत्रिका का 'आंबेडकरवादी गीतकार एवं गायक' विशेषांक मिला। हार्दिक धन्यवाद एवं हार्दिक बधाई। यह बेहतरीन शीर्षक की पत्रिका आपका ऐतिहासिक एवं साहसी कदम है। 'दलित साहित्य' की अवधारणा के पीछे सभी भाग रहे हैं। ऐसे माहौल में 'आंबेडकरवादी साहित्य' की ध्वजा इस पत्रिका के माध्यम से आप फहरा रहे हैं। यह सराहनीय कदम है। दलितत्व कोई मेडल नहीं, जो छाती पर लगाकर सीना तानकर चलें। दलितत्व लाचारी को जन्म देता है और लाचारी के कीचड़ में स्वाभिमान का कमल कभी नहीं खिलता है। दलितत्व फटे लिबास जैसा है। उसकी जगह कूड़ादान है। इसी कारण बाबा साहेब डॉ. आंबेडकर ने 'दलित' शब्द का इस्तेमाल न करने के लिए कहा था। बाबासाहेब आंबेडकर रायटिंग ऐंड स्पीचेस के चौथे खण्ड में इसका सबूत है।

इस विशेषांक में आंबेडकरवादी गीत विधा को स्थान देकर आपने मौलिक कार्य किया है। आंबेडकरी गीत विधा आंबेडकरी आन्दोलन की वाहिनी है, जो आंबेडकरी क्रांति को जन-जन तक पहुँचाती आयी है। भीमराव गणवीर जी का आलेख, डॉ0 सूरजमल सितम जी, डॉ. धम्मपाल बौद्ध जी, देवचंद्र भारती 'प्रखर' जी, भूपसिंह भारती जी के गीतों में समाज को जगाने का सामर्थ्य और सौंदर्य है। ये सभी गीतकारों की सामाजिक प्रतिबद्धता का एहसास दिलाते हैं। भूपसिंह भारती जी ने हरियाणवी बोली में आंबेडकरी चेतना को शिल्पित किया है, जिससे उनके गीतों की खूबसूरती बढ़ी है। इन सभी गीतों पर एक आलेख अलग से लिखा जाय, इतना उनका दर्जा है।

बुद्धप्रिय जी की कविता पर लिखा हुआ आपका लेख भी बढ़िया है। उनकी कविताओं के मौलिक कथ्य पर आपने कुशलता से प्रकाश डाला है। यह विशेषांक एक ऐतिहासिक दस्तावेज़ है। आपको हार्दिक बधाई।

जय भीम! जय भारत! जय संविधान!

प्रो. दामोदर मोरे

मुम्बई, महाराष्ट्र

'आंबेडकरवादी साहित्य' सर्वसाधारण की पत्रिका है।

सादर जय भीम प्रखर जी!

'आंबेडकरवादी साहित्य' पत्रिका का स्तर दिनों-दिन प्रगति की ओर है और जल्दी ही यह सर्वसाधारण की पत्रिका बन जाएगी। पत्रिका का चौथा अंक आपने कविता, ग़ज़ल और गीतों को समर्पित किया है। कुछ नये लोगों को जगह दी है। ये अच्छे संकेत हैं। और आप तो जानते ही हैं कि गीत समाज को जगाने का काम करते हैं।

कर्मशील भारती

नई दिल्ली-67

यह पत्रिका बहुत दूर तक सफर करेगी।

प्रिय संपादक जी! सादर अभिवादन! जय भीम-जय भारत! आपका और आपके सहयोगियों का अच्छा प्रयास है। मैंने 'आंबेडकरवादी साहित्य' पत्रिका के चौथे अंक का परिशीलन किया। यह अंक सुन्दर एवं सार्थक है। यह पत्रिका बहुत दूर तक सफर करेगी। मुझे पत्रिका के हर अंक की दस-दस प्रतियाँ भेजिएगा, ताकि मैं इस पत्रिका का प्रचार कर सकूँ। यह मेरी सोच है।

प्रेमचंद करमपुरी

झूसी (प्रयागराज) उत्तर प्रदेश

आंबेडकरवादी साहित्य को एक नया आयाम देने वाला विशेषांक

आदणीय संपादक महोदय! सर्वप्रथम आपकी मेहनत और चेतना को नमन। कितनी लग्न के साथ आपने आंबेडकरवादी गीतकारों को चुना और उनके गीतों को मार्गदर्शित किया। आपके द्वारा संकलित गीतकारों एवं गायकों का यह विशेषांक हिंदी आंबेडकरवादी साहित्य को एक नया आयाम देने वाला है। जिस प्रकार आपने अपनी पैनी आलोचनात्मक दृष्टि से आंबेडकरवदी साहित्य के उन गीतकारों को प्रकाश में लाने का प्रयास किया है, जिनकी लेखनी सम्भवतः समाज को एक नई दिशा देने वाली है। यह अंक पढ़कर मुझे अत्यंत प्रसन्नता हो रही है। अलग-अलग प्रांतीय कवियों की सुंदर-सुंदर कविताएँ पढ़कर हृदय गदगद हो गया। यह भी अच्छी जानकारी है कि समाज के सभी एक ही मंच पर है और यह कारवाँ बढ़ता जा रहा है। आंबेडकरवादी विचारधारा एक क्रांतिकारी भाव जागृत करने वाली है। यह विशेषांक मुझे बहुत ही अच्छा लगा। अगले विशेषांक के लिए हार्दिक मंगलकामनाएँ एवं ढेरों बधाईयाँ।

सूरजपाल

बरेली, उत्तर प्रदेश

'आंबेडकरवादी साहित्य' पत्रिका के पाठकों से अपेक्षा की जाती है कि वे पत्रिका एवं प्रकाशित रचनाओं की गुणवत्ता व उपयोगिता के संदर्भ में अपनी प्रतिक्रिया 'संपादक के नाम पत्र' के रूप में ambedkarvadisahitya@gmail.com पर प्रेषित करें।
अधिकतम शब्द संख्या 500 तक हो।

संपादकीय

गुरु रविदास जी के जीवन-चरित्र से संबंधित भ्रांतियों का निवारण।

ऐसा चाहूँ राज मैं, जहाँ मिलै सबन को अन्न।
छोट-बड़ौ सब सम बसैं, रविदास रहैं प्रसन्न।।

उक्त दोहे (साखी) के माध्यम से एक आदर्श राज्य की कामना करने वाले, बेगमपुरा शहर की कल्पना करने वाले समतावादी संत, क्रांतिकारी कवि और समाज-सुधारक सद्गुरु रविदास जी के जीवन-चरित्र और उनकी वाणी से संबंधित अनेक भ्रांतियाँ भारतीय समाज में व्याप्त हैं। सत्यनिष्ठा से संपन्न, सम्यक शोध करने वाले कुछ विद्वानों के सत्प्रयास से गुरुजी के जीवन से जुड़ी किवदंतियों का भ्रम-निवारण अवश्य हुआ है, किंतु प्रचार-प्रसार के अभाव में ऐसे शोध-ग्रंथों से सामान्य लोग परिचित नहीं है। आज भी आम जनता गुरु रविदास जी को उसी रूप में स्वीकार करती है जिस रूप में ब्राह्मणवादी लेखकों ने उन्हें प्रदर्शित और प्रचारित किया है। ऐसी स्थिति में सद्गुरु रविदास के सच्चे अनुयायियों की जिम्मेदारी और भी बढ़ गयी है। आम जनता को भ्रम से मुक्त करने के लिये सर्वप्रथम संत रविदास जी के अनुयायियों को सत्य से परिचित होने की आवश्यकता है। सद्गुरु रविदास जी के जीवन-चरित्र से जुड़ी दस बातों पर मैं पाठकों का ध्यान केंद्रित करता है।

1. नाम :-

पहला प्रश्न गुरुजी के नाम से संबंधित है। अधिकांश लोग पूछते हैं कि कौन सा नाम सही है- 'रविदास' या 'रैदास'? वास्तव में यह प्रश्न वही लोग पूछते हैं, जो भारतीय भूगोल और भाषा-विज्ञान से अपरिचित हैं। भारत एक ऐसा देश है, जिसमें स्थित भिन्न-भिन्न प्रदेशों में भिन्न-भिन्न प्रकार की भाषाएँ बोली जाती है। भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में बाईस भाषाओं का उल्लेख है। एक प्रांत (प्रदेश) का भाषाभाषी दूसरे प्रांत की भाषा के शब्दों का उच्चारण अपनी भाषा के अनुसार ही करता है। चूँकि गुरु रविदास जी ने अपने जीवनकाल में अनेक प्रांतों यथा- पंजाब, राजस्थान और महाराष्ट्र आदि का भ्रमण किया था, इसलिए विभिन्न प्रांतों के लोगों द्वारा शब्दोच्चारण के आधार पर गुरुजी का नाम भिन्न-भिन्न रूप में प्रचलित है। आधुनिक युग में हिंदी भाषी क्षेत्र के अंतर्गत उनके नाम के तत्सम रूप को स्वीकार करते हुए उन्हें 'रविदास' कहकर संबोधित करना समीचीन है।

2. जन्मतिथि-

दूसरा प्रश्न गुरु रविदास जी की जन्मतिथि से संबंधित है। उनकी जन्मतिथि के संबंध में एक दोहा प्रचलित

है- ''चौदह सौ तैंतीस में/माघ सुदी पन्दरास/दुखियों के कल्याण हित/प्रकटे श्री रविदास। ''रविदासिया-धर्म के लोग इसी दोहे के आधार पर गुरु रविदास जी की जन्मतिथि को स्वीकार करते हैं। चौदह सौ तैंतीस सन् है या संवत् इस बारे में भी बहुत से लोग भ्रमित हैं। यदि 1433 संवत् माना जाए, तो इसमें से 57 वर्ष घटाने पर 1376 ईस्वी होता है। यदि इन दोनों तिथियों में से किसी भी तिथि को सही मान लिया जाए एक बहुत बड़ी समस्या उत्पन्न हो जाती है। वह समस्या है- संत कबीर और संत रविदास जी के समकालीन होने की समस्या। संत कबीर जी की जन्मतिथि 1398 ईस्वी सर्वमान्य है। यदि गुरु रविदास जी की जन्मतिथि 1376 ईस्वी मानी जाए, तो वे संत कबीर से 22 वर्ष बड़े हो जाएँगे। यदि उनकी जन्मतिथि 1433 ईस्वी मानी जाए, तो वे संत कबीर से 35 वर्ष छोटे हो जाएँगे। संत कबीर और संत रविदास जी की आयु में इतना अंतर स्वीकार करना मानसिक दिवालियापन है। अतः उक्त दोहे में उल्लिखित गुरु रविदास जी की जन्मतिथि को सही नहीं माना जा सकता है। महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ वाराणसी द्वारा संचालित बी.ए. प्रथम वर्ष (हिंदी) के पाठ्यक्रम में एक पुस्तक अनुमोदित है- 'मध्ययुगीन काव्य'। इस पुस्तक के संपादक डॉ. सत्यनारायण सिंह हैं। इस पुस्तक में गुरु रविदास जी की जन्मतिथि संत कबीर की जन्मतिथि के समान दी गयी है अर्थात् 1398 ईस्वी। यह पुस्तक 'महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ' से संबद्ध सभी महाविद्यालयों (वाराणसी, मिर्जापुर, भदोही, गाजीपुर, चंदौली) में वर्षों से पढ़ाई जा रही है। गुरू रविदास जी की जन्मतिथि 1398 ईस्वी मान लेने से संत कबीर से उनकी समकालीनता भी सिद्ध हो जाती है और दोनों संतों की आयु के अंतर की समस्या का भी समाधान हो जाता है। अतः गुरु रविदास जी की जन्मतिथि सन् 1398 ईस्वी ही उपयुक्त है।

3. जन्मस्थान :-

तीसरा प्रश्न गुरुजी के जन्मस्थान से संबंधित है। गुरु रविदास जी के जीवनचरित्र से संबंधित सभी पुस्तकों में उनका जन्मस्थान काशी (वाराणसी) में स्थित मंडूर ग्राम (मंडुआडीह) लिखा गया है तथा इसे अधिकांश विद्वानों और पाठकों द्वारा स्वीकृति प्राप्त है। किंतु रविदासिया-धर्म के लोगों ने वाराणसी में स्थित एक नवीन स्थान सीरगोवर्धनपुर (सीरकरहियाँ) को गुरू रविदास जी का जन्मस्थान घोषित कर दिया है। यदि ऐतिहासिक दृष्टि से विचार किया जाए, तो मंडूर ग्राम ही गुरु रविदास जी का जन्मस्थान सिद्ध होता है। क्योंकि सीरगोवर्धनपुर के आसपास वर्तमान में जो आबादी है, वह कुछ दशकों से ही दिखाई देती है।

4. परिवार :-

चौथा प्रश्न गुरु जी के परिवार से संबंधित है। नाभादास ने अपने ग्रंथ 'भक्तमाल' में संत रविदास जी के पिता का नाम 'रघु' लिखा है, जबकि 'रविदास रामायण' में 'राहु' और 'भविष्य पुराण' में 'मानस दास' नाम का उल्लेख है। रविदासिया धर्म को मानने वाले लोग संत रविदास जी के पिताजी का नाम 'संतोष दास' मानते हैं। 'संतोष दास' पर सिख-संप्रदाय का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है तथा यह नाम बहुत अधिक प्रचलित भी नहीं है। 'राहु' नाम 'रघु' नाम का ही परिवर्तित रूप है। इसलिए डॉ0 इंद्रराज सिंह ने अपनी पुस्तक 'संत रविदास' में

गुरु रविदास जी के पिताजी का नाम 'रघु' ही स्वीकार किया है। इस नाम को अनेक विद्वानों ने समर्थन दिया है। इसलिए गुरु रविदास जी के पिताजी का नाम 'रघु' मानना ही सर्वथा उचित है। संत रविदास जी की माताजी के नाम के संबंध में भी विद्वानों के अनेक मत हैं। वियोगी हरि ने अपने ग्रंथ 'संत सुधा सार' में संत रविदास जी की माताजी का नाम 'घुरबनिया' बताया है। लेकिन इस नाम को डॉ. एस.के. पंजम सहित अनेक विद्वानों ने अस्वीकार कर दिया है। रविदासिया धर्म के लोग संत रविदास जी की माताजी का नाम 'कलसा देवी' मानते हैं। किंतु यह नाम प्रचलित नहीं है तथा इस नाम का उल्लेख रविदासिया धर्म की पुस्तकों के अतिरिक्त अन्य किसी शोधपरक पुस्तक में नहीं है। अतः इस नाम को स्वीकार नहीं किया जा सकता है। संत रविदास जी की माताजी का प्रचलित नाम 'कर्मा देवी' है। यह नाम भाषा, क्षेत्र और समुदाय आदि हर दृष्टिकोण से स्वीकार करने योग्य है। गुरु रविंदास जी की पत्नी के नाम के संबंध में सभी विद्वान एकमत हैं। उनकी पत्नी का नाम 'लोना' सर्वमान्य है। गुरु रविदास जी के पुत्र का नाम विजय दास बताया जाता है। यदि यह भी मान लिया जाए कि गुरु रविदास जी को कोई पुत्र नहीं था, तो भी कोई फर्क नहीं पड़ता है। क्योंकि जिस भी पुस्तक में गुरु रविदास जी के पुत्र का नामोल्लेख है, उसमें केवल नाम (विजय दास) का ही उल्लेख है। उनके पुत्र के बारे में कुछ भी नहीं लिखा गया है। फिर भी यह मानना अधिक उचित है कि संत रविदास जी को एक पुत्र भी था। ऐसा मानने से गुरुजी के अनुयायियों को कम से कम इस बात का तो संतोष रहेगा कि वे निःसंतान नहीं थे। अन्यथा, निःसंतानता से संबंधित दुनिया भर के प्रश्न खड़े करने वाले कुतर्की मनुष्य इस धरती पर विराजमान हैं।

5. गुरु :-

पाँचवाँ प्रश्न गुरु रविदास जी के गुरु के नाम से संबंधित है। नाभादास ने अपने ग्रंथ 'भक्तमाल' में संत रविदास जी के गुरु का नाम 'रामानंद' लिखा है। संत रविदास जी का गुरु माना है। बौद्ध आंबेडकरवादी विद्वानो के अतिरिक्त अधिकांश विद्वानों के 'रामानंद' को ही क्या रामानंद सच में संत रविदास जी के गुरु थे? इस प्रश्न का उत्तर प्राप्त करने के लिए ऐतिहासिक तथ्यों का विवेचन करना आवश्यक है। डॉ. बदरीनारायण श्रीवास्तव ने अपने शोधग्रंथ 'रामानंद-संप्रदाय तथा हिंदी साहित्य पर उसका प्रभाव' में व्यापक साहित्य-सर्वेक्षण और समालोचना के आधार पर रामानंद का जीवनकाल सन् 1299 ईस्वी से सन् 1410 ईस्वी तक माना है। इस आधार पर जब संत रविदास जी की आयु 12 वर्ष थी, उस समय रामानंद की मृत्यु हो चुकी थी। सामान्यतः चर्मकार-समुदाय का बारह वर्षीय बालक इतना जागरूक नहीं होता कि वह भक्ति और अध्यात्म में रूचि ले। यदि ऐसा हो भी सकता है, तो प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि रामानंद की मुलाकात बालक रविदास से कैसे हुई होगी? क्या रामानंद चमारों की बस्ती में स्वयं गये होंगे? यदि नहीं, तो फिर बारह वर्षीय बालक रविदास अपने गाँव से कई किलोमीटर दूर रामानंद के आश्रम पर कैसे गये होंगे? वास्तव में रामानंद को संत रविदास जी का गुरु मानना तर्कसंगत नहीं है। इस बात के पक्ष में दो ब्राह्मण लेखकों के कथन द्रष्टव्य हैं। आचार्य परशुराम चतुर्वेदी ने लिखा है, ''उन पाँच व्यक्तियों (सेन, कबीर, पीपा, रैदास, धना) में से कदाचित किसी ने भी स्पष्ट शब्दों में रामानन्द को अपना गुरु स्वीकार नहीं किया है और उनमें से सभी ने उनका नाम तक नहीं लिया है।''

(उत्तरी भारत की संत परंपरा, पृष्ट 229) इस उद्धरण पर अपना विचार व्यक्त करते हुए डॉ0 बदरीनारायण श्रीवास्तव ने लिखा है, ''जब तक उपर्युक्त संतों की वाणियों का प्रामाणिक संकलन उपलब्ध नहीं हो जाता अथवा उनके जीवन पर प्रकाश डालने वाली प्रामाणिक सामग्री उपलब्ध नहीं हो जाती, तब तक इस संबंध में अंतिम निर्णय देना संभव नहीं होगा। ''(रामानंद-संप्रदाय तथा हिंदी साहित्य पर उसका प्रभाव पृष्ठ 89) अतः स्पष्ट है कि रामानंद को संत रविदास जी का गुरु मानना अनुचित है। इसी प्रकार बौद्ध-आंबेडकरवादी विद्वानों के कथनों का भी विश्लेषण करना आवश्यक है। बौद्ध विद्वान स्वरूप चंद्र बौद्ध ने अपनी पुस्तक 'बौद्ध विरासत के पुरोधा गुरु रविदास' में संत रविदास जी के गुरु का नाम 'रैवतप्रज्ञ' लिखा है। लेकिन उन्होंने रैवतप्रज्ञ के जीवनकाल (जन्म और मृत्यु) का कहीं उल्लेख नहीं किया है। इसी प्रकार डॉ. एस.के. पंजम ने अपनी पुस्तक 'संत रविदास- जन रविदास' में संत रविदास जी के गुरु का नाम 'शारदानंद' लिखा है। साथ ही, उनका यह भी मानना है कि शारदानंद का ही दूसरा नाम 'रैवतप्रज्ञ' है। किंतु डॉ. पंजम जी ने भी शारदानंद के जीवनकाल का कहीं उल्लेख नहीं किया है। उक्त दोनों बौद्ध-आंबेडकरवादी विद्वानों के मत को प्रामाणित सिद्ध करने के लिए इस विषय में समुचित शोध करने की आवश्यकता है। फिलहाल तो, इन दोनों विद्वानों के कथन भी संदिग्ध हैं।

6. व्यवसाय :-

छठवाँ प्रश्न गुरु रविदास जी के व्यवसाय से संबंधित है। डॉ. इंद्रराज सिंह, डॉ. योगेंद्र सिंह तथा अन्य अनेक ब्राह्मणवादी लेखकों ने गुरु रविदास जी का व्यवसाय 'चमड़े का जूता बनाना' स्वीकार किया है। वंचित-वर्ग के अधिकांश लोग इसी को सही मानते हैं। वे प्रफुल्लित और गर्वित भाव से यह कहते हुए पाये जाते हैं कि ''संत रविदास जी चमड़े का जूता बनाकर भी ईश्वर की भक्ति किये। वे चमत्कार दिखाकर ब्राह्मणों को झुका दिये।'' वास्तव में, ऐसे लोग जनश्रुतियों का अंधानुकरण करते हैं। जबकि मध्यकालीन भारत का इतिहास लिखने वाले किसी भी इतिहासकार ने अपनी पुस्तक में इस बात का उल्लेख नहीं किया है कि मध्यकाल में बनारस के आसपास चमड़े का जूता बनाने का व्यवसाय किया जाता है। भाषायी तौर पर 'चर्मकार' शब्द का अर्थ है- 'चमड़े का काम करने वाला' लेकिन इसका तात्पर्य यह नहीं है कि चमड़े का जूता बनाना भी चमारों का ही काम रहा है। यदि इस बात को सही मान लिया जाए, तो चमड़े का जूता/चप्पल बनाने वाली कंपनियों के सभी मालिकों टाटा और बाटा आदि तथा इनके थोक-विक्रेताओं को चर्मकार (चमार) कहना पड़ जाएगा। सच तो यह है कि संत रविदास जी चमड़े से जूता बनाने का काम नहीं करते थे। वे ऐसे परिवार से थे, जिस परिवार में 'ढोर' (मरा हुआ जानवर) ढोने का काम किया जाता था। गुरु रविदास जी ने स्व्यं कहा है- जाके कुटुंब के ढेढ़ सब ढोर ढोवंत। फिरहि अजहु बनारसी आसपास।'' यहाँ पर 'ढोर ढोवंत' का कुछ लोगों ने ढोरों (पशुओं) का व्यापार करने का अर्थ करते हुए संत रविदास जी के पिता को एक समृद्ध व्यापारी-वर्ग से संबंधित करने का प्रयास कियाा है। यदि इस दूसरे अर्थ को ही सही मान लिया जाए, तो भी यही सिद्ध होता है कि गुरु रविदास जी चमड़े का जूता नहीं बनाते थे। बौद्ध/आंबेडकरवादी विद्वान डॉ. सूरजमल सितम ने अपनी पुस्तक 'बोधिसत्व

गुरु रविदास और उनके आंदोलन' में गुरु रविदास जी के द्वारा विभिन्न प्रांतों में स्थित चौबीस स्थानों का भ्रमण करने का उल्लेख किया है। यदि गुरु रविदास जी एक जगह बैठकर चमड़े का जूता बनाने का ही काम करते, तो वे भारत के विभिन्न प्रदेशों का भ्रमण कैसे करते? अतः स्पष्ट है कि गुरु रविदास जी न तो अपना पैतृक व्यवसाय किये, न ही चमड़े का जूता बनाने का व्यवसाय किये। चूँकि गुरु रविदास जी श्रमण परंपरा के संत थे, इसलिए वे आजीवन प्रवचन और उपदेश देकर लोगों को सुखी जीवन जीने के लिए प्रेरित करते रहे तथा लोगों द्वारा प्रदत भेंटस्वरूप धनराशि से अपना जीवन-निर्वाह करते रहे।

7. साधना-मार्ग :-

सातवाँ प्रश्न गुरु रविदास जी के साधना-मार्ग से संबंधित है। हिंदी साहित्य के इतिहास में पूर्व मध्यकाल अर्थात् भक्तिकाल के अंतर्गत गुरु रविदास जी को स्थान प्रदान किया गया है। साहित्य के इतिहासकारों ने भक्तिमार्ग को चार प्रकारों में विभाजित किया है- ज्ञानमार्गी निर्गुण, प्रेममार्गी निर्गुण, राममार्गी सगुण, कृष्णमार्गी सगुण। सामान्यतः ज्ञानमार्गी निर्गुण धारा के कवियों को संत के नाम से संबोधित किया जाता है और प्रेममार्गी निर्गुण धारा के कवियों को 'सूफी' के नाम से संबोधित किया जाता है। इनके अतिरिक्त राममार्गी सगुण धारा और कृष्णमार्गी सगुण धारा के सभी कवियों को 'भक्त' के नाम संबोधित किया जाता है। गुरु रविदास जी सगुण भक्त नहीं थे, बल्कि निर्गुण संत थे। उनकी वाणियों में जो भक्ति और प्रेम के शब्द आये हैं वह माधुर्य-भाव के प्रकृति-प्रेम का लक्षण है। साथ ही यह भी संभव है कि उनकी वाणियों में ब्राह्मणवादी आचार्यों/लेखकों द्वारा जोड़-घटाव किया गया हो। इसलिए इस संदर्भ में अभी सम्यक शोध करने की आवश्यकता है।

8. शक्ति-प्रदर्शन :-

आठवाँ प्रश्न गुरु रविदास जी के शक्ति-प्रदर्शन से संबंधित है। भारत के अधिकांश निरक्षर, साक्षर और शिक्षित लोग यही मानते हैं कि संत रविदास जी शक्तिशाली व चमत्कारी थे। नाभादास ने अपने ग्रंथ 'भक्तमाल' में गुरु रविदास जी को चमत्कारी-भक्त रूप में वर्णित किया है। गुरु रविदास जी के जीवन-चरित्र का चमत्कारपूर्ण वर्णन लगभग सभी ब्राह्मणवादी लेखकों ने किया है। उनसे जो कुछ कमी रह गयी थी, उसे रविदासिया-धर्म के अनुयायियों ने पूरा कर दिया है। गुरु रविदास जी के जीवन-चरित्र से संबंधित चमत्कारपूर्ण प्रसंगों का आरंभ गंगा और ब्राह्मण के वृतांत से होता है। लोगों का मानना है कि गुरु जी ने कहा था, ''मन चंगा, तो कठौती में गंगा।'' जबकि गुरु रविदास जी की समस्त वाणियों में इस प्रकार का कथन कही नहीं मिलता है। वास्तव में, यह कथन गोरखनाथ का है। मूल गोरखवाणी इस प्रकार है- ''अवधू मन चंगा तो कठौती में गंगा/बांध्या मेल्हा तो जगत्र चेला। ''(हिंदी साहित्य का इतिहास- डॉ0 नगेंद्र व डॉ0 हरदयाल, पृष्ठ 93) स्पष्ट है कि जब यह कथन गुरु रविदास जी का है ही नहीं, तो गंगा और ब्राह्मण का वृतांत भी मिथ्या है। वैसे भी किसी भी मध्यकालीन संत ने देवी-देवताओं की आराधना नहीं की है। इसलिए संत रविदास जी के द्वारा गंगा की भक्ति करने का तो प्रश्न ही नहीं उत्पन्न होता है। वर्तमान में, स्वरूपचंद्र बौद्ध, भद्रशील रावत, श्याम सिंह, डॉ0 सूरजमल सितम, डॉ. विजय कुमार त्रिशरण और सतनाम सिंह आदि बौद्ध/आंबेडकरवादी विद्वानों ने

अनेक प्रामाणिक तर्कों के आधार पर यह सिद्ध कर दिया है कि गुरु रविदास जी चमत्कारी नहीं, बल्कि क्रांतिकारी थे।

9. शिष्य-शिष्या :-

नौवाँ प्रश्न गुरु रविदास जी के शिष्य/शिष्या से संबंधित है। अभी तक गुरु रविदास जी के जीवन-चरित्र के बारे में लिखी गयी पुस्तकों में उनकी केवल दो शिष्याओं झालीबाई (सास) और मीराबाई (बहू) का उल्लेख मिलता है। जबकि ऐसा कैसे हो सकता है कि सौ वर्षों से अधिक जीवनकाल में गुरु रविदास जी के केवल दो ही शिष्य बने होंगे और वे भी केवल महिलाएँ, जो एक ही परिवार से थीं। क्या गुरु रविदास जी पुरुषों के बीच में नहीं जाते थे, उन्हें प्रवचन नहीं देते थे, उनसे मेल नहीं रखते थे? क्या पुरुषों को गुरु रविदास जी की वाणी प्रभावित नहीं करती थी? आखिर क्या कारण है कि गुरु रविदास जी के शिष्यों में पुरुषों का उल्लेख नहीं मिलता है? सच तो यह है कि गुरु रविदास जी के जीवन-चरित्र से संबंधित खोज अभी तक अधूरी है।

10. परिनिर्वाण :-

दसवाँ प्रश्न गुरु रविदास जी के परिनिर्वाण से संबंधित है। गुरु रविदास जी का परिनिर्वाण कब हुआ था? इसके उत्तर में रविदासिया धर्म के लोग उनकी जन्मतिथि की तरह की बेतुका उत्तर देते हैं। महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ वाराणासी द्वारा निर्धारित बी.ए. प्रथम वर्ष (हिंदी) की पाठ्यपुस्तक 'मध्ययुगीन काव्य' में गुरु रविदास जी की परिनिर्वाण-तिथि संत कबीर के समान ही लिखी गयी है। अर्थात् गुरु रविदास जी का परिनिर्वाण 120 वर्ष की आयु में सन् 1518 ई0 में हुआ था। इस तिथि की प्रमाणिकता की जाँच करने के लिए गुरु रविदास जी की शिष्या मीराबाई की समकालीनता का विवेचन करना आवश्यक है। एनसीईआरटी द्वारा निर्धारित ग्यारहवीं कक्षा की हिंदी पाठ्यपुस्तक के अनुसार, मीराबाई का जन्म सन् 1498 ई0 में हुआ था। भोजराज के साथ उनका विवाह सन् 1516 ई0 में हुआ था। विवाह के कुछ ही दिनों बाद उनके पति का देहांत हो गया था। पति के देहांत के बाद मीराबाई पूरी तरह से विरक्त हो गयी थीं। चूँकि यह सर्वमान्य और प्रसिद्ध है कि गुरु रविदास जी के जीवन के अंतिम समय में झालीबाई और मीराबाई से उनकी मुलाकात हुई थी, इसलिए गुरु रविदास जी की परिनिर्वाण तिथि 1518 ई0 ही ठीक जान पड़ती है। जब तक कोई ठोस प्रमाण नहीं प्राप्त हो, तब तक इस तिथि को स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

गुरु रविदास जी के परिनिर्वाण से संबंधित प्रश्न में एक और प्रश्न जुड़ जाता है कि उनका देहांत प्राकृतिक रूप से हुआ था या फिर उनकी हत्या की गयी थी? रविदासिया धर्म वाले तो गुरु रविदास जी की हत्या की बात को किसी भी स्थिति में स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हैं। वे गुरु रविदास जी को शक्तिशाली और चमत्कारी ही नहीं, बल्कि परमात्मा (ईश्वर) भी मानते हैं। वे भगवान बुद्ध से तुलना करते हुए यह कहते हुए पाये जाते है कि अगर बुद्ध 'भगवान' हो सकते हैं, तो गुरु रविदास जी भी 'भगवान' हैं। उन अल्पज्ञानियों को यह नहीं पता है कि बुद्ध को 'भगवान' किस अर्थ में कहा जाता है? बुद्ध ने आत्मा और परमात्मा के अस्तित्व को कभी

स्वीकार नहीं किया। बौद्ध धम्म के अनुयायी भी आत्मा-परमात्मा में विश्वास नहीं रखते हैं। 'भगवान' का आशय है- जो अपनी समस्त मानसिक बुराइयों को भग्र (नष्ट) कर चुका है, वही भगवान है। यदि इस अर्थ को ग्रहण करते हुए रविदासिया-धर्म वाले गुरु रविदास जी को 'भगवान रविदास' कहकर संबोधित करें, तो स्वीकार करने योग्य है। लेकिन वे इस अर्थ को नहीं, बल्कि हिंदूवादियों के अर्थ को ग्रहण करते हुए गुरु रविदास जी को 'भगवान रविदास' कहते हैं, जो अवैज्ञानिक और अतार्किक है।

सच तो यह है कि गुरु रविदास जी की हत्या हुई थी। लेखक सतनाम सिंह ने अपनी पुस्तक 'गुरु रविदास की हत्या के प्रामाणिक दस्तावेज' में उनकी हत्या के पर्याप्त प्रमाण प्रस्तुत किया है। कुछ लोगों के मन में यह प्रश्न उत्पन्न हो सकता है कि जब गुरु रविदास जी के शत्रुओं को उनकी हत्या ही करनी थी, तो वे वृद्धावस्था तक प्रतीक्षा क्यों किये? उन्होंने गुरु रविदास जी की हत्या उनके युवाकाल में ही क्यों नहीं कर दी? यह प्रश्न स्वयं मेरे मन में उत्पन्न हो चुका है। लेकिन मैं इस प्रश्न का उत्तर पा चुका हूँ और पूरी तरह से संतुष्ट हो चुका हूँ। इस प्रश्न का उत्तर मैंने स्वयं प्राप्त किया है। दरअसल, मेरे गाँव के पास ही एक सत्तर साल के बूढ़े व्यक्ति की हत्या कर दी गयी थी। लोगों को विश्वास नहीं हो रहा था कि किसी ने उस वृद्ध व्यक्ति की हत्या की है। क्योंकि सबके मन में यही प्रश्न था कि भला एक वृद्ध व्यक्ति की हत्या कोई क्यों करेगा? लेकिन कुछ ही दिनों बाद पुलिस की जाँच-पड़ताल से पता चल गया कि उस वृद्ध व्यक्ति के खानदान वालों ने ही संपत्ति के लालच में उसकी हत्या की थी। इसलिए गुरु रविदास जी की हत्या से संबंधित इस तरह के प्रश्न से भ्रमित नहीं होना चाहिए। शत्रु जब आवेश में होता है और जब अनुकूल अवसर मिलता है, तभी वह हत्या करता है। हत्या का उम्र से कोई संबंध नहीं है।

- देवचंद्र भारती 'प्रखर'

विचार

डॉ0 आर0एम0 राव 'मनोहर'
बरेली, उत्तर प्रदेश
मोबाइल : 7060240326

'गोल' के अध्यक्ष की कलम से ....
'शील की महत्ता'

मनुष्य सामाजिक प्राणी है और जन्म लेते ही वह परिवार के साथ रहता है। माँ उसकी प्रथम शिक्षिका है, जो जीवन के प्रारम्भिक काल में बच्चे को खाना, पीना, चलना, बोलना अन्य व्यक्तियों को पहचानना आदि सब सिखाती है। पिता भी उसे सिखाता है। अन्य बच्चों, जैसे- भाई-बहनों को कैसे बुलाते हैं, उसके साथ कैसे व्यवहार करते हैं? सीखने का क्रम आजीवन चलता रहता है। इसी क्रम में व्यक्ति वयस्क होता है, साथ ही संस्कारित भी। उसका स्वयं का एक व्यक्तित्व निरूपित होता है और उसका चाल-चलन तथा अंततः चरित्र-निर्माण भी। परिवार और समाज में अन्य लोगों से उसका कैसा आचरण है? यह उसके द्वारा शील (सदाचार) का पालन ही तय करता है कि वह व्यक्ति समाज के लिए कैसा है? स्वयं अकेले में अपने लिए भी उसका क्या आचरण है? उसी से उसके नैतिक मूल्य भी ज्ञात होते हैं। व्यक्ति के आचरण पर ही यह निर्भर करता है कि वह अच्छा नागरिक है या बुरा। उसकी समाज में क्या उपयोगिता है? उसका क्या महत्व है? किसी समाज में अच्छे आचरण के सर्वमान्य मानक होते हैं और समय-समय पर समाज-सुधारक संत, महापुरुष लोकहित में लोगों को सदाचार सिखाते आये हैं- चाहे वह अपनी वाणी से अथवा लिखित रूप से अपने ग्रंन्थों द्वारा। सर्वप्रथम हम ढाई हजार साल पहले तथागत बुद्ध द्वारा स्थापित पाँच शीलों की चर्चा करेंगे-

1. **पाणातिपाता वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।**
2. **अदिन्नदाना वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।**
3. **कामेसु मिच्छाचारा वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।**
4. **मुसावादा वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।**
5. **सुरा-मेरय-मज्ज पमादट्ठाना सिक्खापदं समादियामि।**

अर्थात ....

1. **प्राणि हिंसा से विरत रहने,**
2. **चोरी से विरत रहने,**
3. **परस्त्री गमनादि दुराचारों से विरत रहने,**
4. **झूठ से विरत रहने,**
5. **कच्ची, पक्की शराब और नशीली चीजों के सेवन से विरत रहने की शिक्षाा ग्रहण करता हूँ।**

बौद्ध धम्म में उपासकों द्वारा त्रिशरण के साथ इन्हीं सदाचार-शीलों के अनुपालन को ही धम्म मानते हैं। इसी कड़ी में लगभग छः सौ वर्ष पूर्व संत शिरोमणि सद्गुरु रविदास जी के सुझाये सदाचार अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह ये पाँचों इंसान की इंसानियत के लुटेरे हैं। अतः इनसे विरत रहें- ''काम क्रोध मोह मद माया, इन पाँचों मिल लूटैं। ''नशीली चीजों का सेवन न करें- ''रैदास मदिरा को पिए, जो चहे चढ़े उतराय। ''अज्ञानता को दूर भगाने के लिए विद्या अर्जित करें- ''सत्य विद्या को पढई, सदा प्राप्त करो ज्ञान/रविदास कहे बिन विद्या, नर को जान अंजान। ''झूठ न बोलें।

मन की सत्यता पर बहुत जोर दिया रविदास जी ने- ''मन ही पूजा मन ही धूप/मन ही सेउ सहज स्वरुप। ''आडम्बर एवं पाखंड का प्रबल विरोध किया गया- ''माथे तिलक हाथ जपमाला/जग ठगने को स्वांग रचाया/मारग छोड़ कुमारग डहके/सांची प्रीत बिनु राम न पाया। ''सामाजिक विषमता जाति-पाँति, ऊँच-नीच के खिलाफ़ तो उन्होंने आंदोलन ही छेड़ रखा था- ''जाति पांति के फेर में/उलझि रहे सब लोग/मनुष्यता को खात है/रविदास जाति का रोग। ''हिन्दू-मूस्लिम धर्म की वैमनस्यता के विरुद्ध वे मुखर रहे- ''मंदिर मस्जिद एक हैं/इन मँह अंतर नाहि/रविदास राम रहमान का/झगडौ कोउ नाहिं। ''संत प्रवर श्रमण संस्कृति के हिमायती थे- ''रविदास श्रम करि खाईहिं/जो लौं पार बसाय/नेक कमाई जो करै/कबहुँ न निहफल जाय। ''संत रविदास ने सुख-दुःख में समान आचरण करने के लिए इन्द्रियों को अपने वश में रखने की सीख दी- ''जो बस राखे इन्द्रियां/सुख दुःख समझि समान/सोउ अखरति पद पाइगों/कहि रैदास बखान।''

आज के परिप्रेक्ष्य में शील/सदाचार और भी प्रासंगिक हो गये हैं, क्योंकि वर्तमान में व्यक्तियों का पहले से अधिक समाज के विभिन्न वर्गों के साथ विभिन्न कारणों से मिलना-जुलना बढ़ गया है। जैसे- बढ़ती आबादी, शहरीकरण, औद्योगीकरण, बेरोजगारी, महँगाई आदि जिसके फलस्वरुप गरीबी तथा समय की कमी के कारण बिखरते परिवार आम बात हो गयी है। बिना श्रम किये अधिकतम प्राप्ति की लालसा भी कदाचार, अनाचार को प्रेरित करते हैं। घटते नैतिक मूल्य इन्हीं सबका दुष्परिणाम हैं। इधर राजनीतिक कारणों से धार्मिक उन्माद, ध्रुवीकरण और जातिगत भेदभाव पनपाए जाते हैं। जिसके कारण पुनः दंगे फसाद, हत्या, नशाखोरी बलात्कार तथा अंततः लोगों में अवसाद होना अवश्यंभावी हो गया है, जिसके मूल में सदाचारों का अनुपालन न किया जाना है। अतः वर्तमान में शास्ता बुद्ध, रविदास एवं कबीर आदि महान समाज सुधारकों, संतों द्वारा विभिन्न कालखंडों में सुझाये गये मानवतावादी शीलों (सदाचारों) का पालन किया जाना और भी आवश्यक हो गया है।

आलेख

डॉ. बी.आर. बुद्धप्रिय
बरेली, उत्तर प्रदेश
मो.: 9412318482

बौद्ध परम्परा के बोधिसत्व स्वरुप हैं- सद्गुरु रैदास

माघी पूर्णिमा के दिन वाराणसी में रग्घुजी व माँ करमादेवी के कोख से भारत भूमि पर संत रैदास का आविर्भाव हुआ। तुकाराम, नरसी-दादू, मेहता, गरुनानक, कबीर, चोखा मेला, पीपादास इन सभी मध्यकालीन सन्तों में प्रवर सद्गुरु रैदास का स्थान सर्वश्रेष्ठ है।

भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम् संस्कृतियों में से एक है। इस संस्कृति को जीवन्त रखने में सन्त परम्परा का विशेष योगदान है। चेतना, जन आन्दोलन, समतामूलक समाज की परिकल्पना, मानव सेवा आदि क्रान्तिकारी परिवर्तन के लिये सन्त शिरोमणी सद्गुरु रैदास का नाम बड़े आदर तथा सम्मान के साथ लिया जाता है। बोधिसत्व रैदास ने सामाजिक समानता लाने के लिए अपनी वाणियों के माध्यम से तत्कालीन शासकों को भी सचेत करते रहे। घृणा और सामाजिक प्रताड़नाओं के बीच सन्त रैदास ने टकराहट और भेदभाव मिटाकर प्रेम तथा एकता का संदेश दिया। सद्गुरु रैदास ने जीवन और जगत के यथार्थ को पहचाना, उनका युगबोध और आत्मबोध अत्यन्त तत्वपूर्ण विस्तृत है। उन्होंने जो उपदेश दिये, दूसरों के कल्याण व भलाई के लिये दिये और उनकी चाहत एक ऐसा समाज की थी जिसमें राग, द्वेष, ईर्ष्या, दुःख, कटुता का समावेश न हो। सद्गुरु रैदास कहते हैं-

ऐसा चाहूँ राज मैं, जहाँ मिलै सबन को अन्न।
छोट बड़ो सब सम बसै, रैदास रहें प्रसन्न॥

वैचारिक क्रान्ति के प्रणेता सद्गुरु रैदास की एक वैज्ञानिक सोच है, जो सभी की प्रसन्नता में अपनी प्रसन्नता देखते हैं। स्वराज ऐसा होना चाहिए कि सभी को किसी भी प्रकार का कोई कष्ट न हो, एक साम्यवादी, समाजवादी व्यवस्था का निर्धारण हो। इसके प्रबल समर्थक सद्गुरु संत रैदास जी माने जाते हैं।

देश, समाज और व्यक्ति की पराधीनता से उसका अस्तित्व समाप्त हो जाता है। पराधीनता से व्यक्ति की सोच संकुचित हो जाती है। संकुचित विजन रखने वाला व्यक्ति बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय के यथार्थ को व्यावहारिक रूप प्रदान नहीं कर सकता है। सद्गुरु रैदास जी पराधीनता को हेय दृष्टि से देखते हुए तत्कालीन समाज व लोगों को पराधीनता से मुक्ति का प्रयास करना चाहिए, ऐसा उनका मानना है।

रैदास दास पराधीन सो, कौन करै हैं प्रीत।
पराधीन को दीन क्या, पराधीन बेदीन॥

संत रैदास के मन में समाज में व्याप्त कुरीतियों के प्रति आक्रोश है। वह सामाजिक कुरीतियों, बाह्य

आडम्बर, रुढ़ियों के खिलाफ एक क्रान्तिकारी परिवर्तन की मांग करते हैं। जब तक समाज में वैज्ञानिक सोच पैदा नहीं होगी, वैचारिक विमर्श नहीं होगा, यथार्थ की व्यावहारिक पहल नहीं होगी, तब तक इंसान पराधीनता से मुक्ति नहीं पा सकता है।

भारत की सरजमीं पर सदियों से जातिवादी व्यवस्था का प्राचीन इतिहास रहा है। जातिवादी व्यवस्था में मनुष्य एवं मनुष्य के बीच झूठा अलगाव उत्पन्न करके मानवता की हत्या कर दी गयी थी। जातिवादी व्यवस्था के पोषकों ने देश या समाज हित में कोई भी क्रान्तिकारी कार्यक्रम ही नहीं दिये। जातिवादी व्यवस्था के रोग को सद्गुरु रैदास ने पहचाना, इसलिये उन्होंने मानव एकता की स्थापना पर बल दिया। जातिवादी व्यवस्था को बगैर दूर किये देश व समाज की उन्नति सम्भव नहीं है। रैदास जी कहतें हैं-

जाति जाति में जाति है, जिऊ केलन के पात।
रैदास मानुष ना जुड़ सके, जब तक जाति न जात।।

ओछा कर्म और परम्परागत जाति व्यवस्था को रैदास ने धिक्कारा है। मानव एक जाति है। सभी मनुष्य एक ही तरह से पैदा होते हैं। मानव को पशुवत जीवन जीने के लिए बाध्य करना कुकर्म की श्रेणी में आता है। कुकर्म से मनुष्य बुरा बनता है। सत्कर्म से मनुष्य श्रेष्ठ बनता है। जाति से कोई मनुष्य ऊँचा या नीचा नहीं होता।

रविदास जन्म के कारने, होत न कोई नीच।
नर कूँ नींच करि डारि है, ओछे कर्म की कींच।।
न जच्चा बसलों होति, न जच्चा होत ब्राह्मणो।
काम्मना बसलों होति, काम्मना होति ब्राह्मणो
(सुत्र निपात्)।।

इस वैज्ञानिक विचारधारा के तल्कालीन प्रभाव से मुक्ति भी मिली और आज भी इस विचारधारा का लाभ समाज को मिलता दिखाई दे रहा है। 21वीं सदी में इसकी सार्थकता और भी बढ़ गयी है। समाज सुधार की अधारशिला व्यक्ति का सुधार है। सबसे पहले व्यक्ति को नैतिक दृष्टि से सीमाओं से ऊपर उठकर विवेक, बुद्धि आदि इस्तेमाल करना चाहिए, तभी समाज उन्नत हो सकेगा। व्यक्तिगत सद्चरित्रता, स्वच्छता तथा सरलता पर ध्यान देना चाहिए।

वैचारिक औदात्य, प्रगतिशील चिंतन, सामाजिक सरोकार तथा आध्यात्मिक दर्शन के साथ भौतिक दर्शन की विशुद्ध अभिव्यक्ति के कारण भक्तिकालीन निर्गुणी सन्त परम्परा के अद्भुत नाम हैं सन्त रैदास। अपनी क्रान्तिकारी वैचारिक अवधारणा, सामाजिक और सांस्कृतिक चेतना तथा युगबोध की मार्मिक अभिव्यक्ति के कारण उनका धम्म दर्शन लगभग 600 वर्ष बाद आज भी प्रासंगिक है। संत रैदास अपने समय से बहुत आगे थे। लोग उन्हें समझ नहीं पाये और उनके कथनानुसार योजनाबद्ध तरीके से कोई कार्य नहीं कर पाये, जिससे सामाजिक या राजनैतिक क्रान्ति हो सके।

मैं रूखी-सूखी खांऊँ,
औरन की भूख मिटाऊँ।

समतामूलक समाज की स्थापना तभी सम्भव है, जब सभी के सुख-दुःख का ख्याल रखा जाए। अज्ञानता के कारण प्रभाव स्थापित करने में लोग विभेद करते हैं। सद्चरित्र और सद्कर्म के ज्ञान को प्रकाशित करते हुए रैदास कहते हैं कि सभी जन एक ही मिट्टी के बने हैं। सभी के लिये ज्ञान का मार्ग खुला हुआ है।

रविदास एक ही बूँद सौ,
सबहिं भयों विस्थार।

मूरख हैं जो करत हैं,
वरण अवरण विचार॥

जन्म आधारित वर्ण व्यवस्था को रैदास ने नकार दिया। उन्होंने कर्म प्रधान संविधान को अपने जीवन में सार्थक किया। सन्त रैदास ने सामाजिक परम्परागत ढाँचे को ध्वस्त करने का प्रयास किया। रैदास कहते है :-

रविदास ब्राह्मण मत पूजिए,
जेऊ होवे गुणहीन।

पूजहिं चरण चंडाल के,
जेऊ होंवे गुण प्रवीन॥

भारतीय अर्थव्यवस्था की दीन-हीन स्थिति को देखते हुए रैदास स्वयं अपने बोझ को दूसरों के ऊपर लादने के पक्ष में नहीं थे। इसलिए उन्होंने पैतृक व्यवस्था को संघर्षमय जिन्दगी में अपनाया। गरीबी दूर करने का इससे अच्छा उपाय क्या हो सकता है? रैदास जी कहते हैं :-

रविदास श्रम करि खाइहिं,
जौं लौं पार बसाय।

नेक कमाई जो करई,
कबहुँ न निष्फल जाय॥

अज्ञानता के आकाश को छूता समाज निजी स्वार्थ की पूर्ति में लीन था। एक दूसरे में बैर-भाव पैदा करके उसकी धन सम्पत्ति छीन ली जाती थी। अन्याय, अत्याचार, शोषण का चारों तरफ बोल बाला था। इन विषय परस्थितियों में भी रैदास ने कभी किसी धन का अतिक्रमण नहीं किया। उन्होंने निस्वार्थ रूप से जनता की भलाई की और धनसंचय की प्रवृत्ति को कष्ट का कारण भी बताया। रैदास जी कहते हैं :-

धन संचय दुःख देत है,
धन मति तिआगे सुख होई।

रविदास सीख गुरुदेव की
धन मति जौर कोई॥

रविदास जी ने धन लोलुपता, संचय और असन्तोष आदि अवगुणों को दूर करने का मार्ग प्रशस्त किया। उन्होंने श्रम की महत्ता को बताया। उन्होंने समाज को पथभ्रष्ट करने वाले पोगापंथियों से सावधान रहने का सन्देश दिया। बाह्य आडम्बर, ढकोसला, परम्परा, रूढ़ियों, मूर्तिपूजा आदि का खण्डन किया। केवल दिखावा करके समाज को गुमराह करना धोखा के अलावा कुछ नहीं। इस प्रकार के बहुरूपियेपन को दूर करके ही एक वैज्ञानिक मार्ग की दिशा का निर्धारण सम्भव हो सकता है। रैदास जी कहते हैं :-

माथे तिलक हाथ जप माला,
जग ठगने को स्वॉग रचाया।

मारग छोड़ि कुमारग डहके,
सॅची प्रीत बिनु राम न पाया॥

सद्गुरु रैदास ने परम्परा, कट्टरता, हठधर्मिता और रूढ़ियों का परित्याग कर एक समन्वय विचारधारा का निर्धारण किया, जिससे हिन्दू-मुस्लिम संस्कृति की विशाल खाई को पाटने में सहायता मिली। भारत जैसे धर्मनिरपेक्ष देश को भावनात्मक एकता का संदेश दिया। रैदास जी कहते हैं :-

कृष्ण, करीम, राम, हरि,
राघव, जब लग एक न पेषा।
वेद कतेब, कुरान, पुरातन,
सहज एक नहि देखा॥

सन्त रैदास ने श्रम साधना और आत्मोन्नति के लिए सदाचार, नैतिकता और आत्मसंयम पर बल दिया। उन्होंने बताया कि काम, क्रोध, मोह, लोभ, मद, अहंकार से तृष्णा में वृद्धि होती है। मनुष्य निजी स्वार्थ का जब परित्याग करता है, सभी के सुख की कामना करता है। तभी दुःख को मिटाता है। संत रैदास जी कहते हैं :-

बुद्धि अरू विवेकहि जाऊ,
राजन चाहौ पास।
इंदरियाँ संग रित कौ,
तजि देहु रविदास॥

सन्त रैदास कर्म तथा स्वभाव दोनों से मानवतावादी थे। वह आजकल के समाज सुधारकों जैसे नहीं थे। उनको अपने प्रचार-प्रसार की लालसा नहीं थी। उन्होंने करूणा, मैत्री, प्रज्ञा, चेतना (वैचारिक) द्वारा देश की दीन-हीन अवस्था, दुर्दशा और भेदभाव को समूल समाप्त करने का सदैव प्रयास किया। उनका समदर्शी भाव समाज उत्थान, निरीह प्राणियों की सेवा की उत्कृष्ट मानवता थी। मानवकृत होने के कारण झूठ और अमान्य भेदभाव अच्छा नहीं है। सन्त रैदास जी बचपन से ही सुधारात्मक प्रवृत्ति के थे। उन्होंने मानवतावादी विचारों का प्रचार-प्रसार जीवनपर्यन्त किया। रैदास जी कहते हैं कि जिस समाज में अविद्या है, अज्ञानता है, उस समाज का उत्थान सम्भव नहीं है तथा मानव का स्वाभिमान सुरक्षित नहीं रह सकता है। वास्तविक ज्ञान का प्रकाश विद्या अर्जन से ही प्राप्त किया जा सकता है। इसलिए सभी मानव को विद्या प्राप्त करनी चाहिए।

सत्य विद्या को पढ़ै,
सदा प्राप्त करो ज्ञान।
रैदास कहे बिन विद्या,
नर को जान-अन्जान॥

सन्तशिरोमणि रैदास अपनी वैचारिक यात्रा में उनके साथ हमराही होते हैं, जो भौतिकवादी दर्शन के प्रणेता हैं। जो आस्था के स्थान पर तर्क को प्रश्रय देते हैं और श्रेष्ठगुणों से सम्पन्न व्यक्ति को सम्मान देने के हिमायती हैं। तथागत बुद्ध, चार्वाक, सन्त कबीर, ज्योतिबा फूले, बाबा साहब डॉ. आंबेडकर हमारे प्रेरणा स्रोत है। भारतीय चिन्तन की परम्परा में अश्वघोष के बाद सम्भवतः निर्गुण सन्तों ने जाति-पाँति विरोधी स्वरों की निर्भीकता के साथ अभिव्यक्ति की थी। निसन्देह संत रैदास का पद श्रेष्ठ है और सांस्कृतिक परिवर्तन के लिए प्रासांगिक भी।

जन्म जाति कूँ छाँड़ि कर,
करनी जान प्रधान।
इहयों वेद को धर्म है,
कहें रैदास परवान॥

वरिष्ठ साहित्यकार वंशीधर सिंह लिखते हैं कि रैदास और कबीर की वैचारिक ताकत के पीछे उनके दस्तकारी कर्म का बहुत बड़ा हाथ है। कार्ल मार्क्स ने कहा, ''मनुष्य की चेतना उसके अस्तित्व को निर्धारण नहीं करती, बल्कि सामाजिक अस्तित्व ही उसकी चेतना को निर्धारित करता है।

मन्दिर-मस्जिद एक हैं,
इन मँह अन्तर नाहिं।

रैदास राम रहमान का,

झगड़ऊ कोऊ नाहिं॥

अन्तर्राष्ट्रीय साहित्यकार डॉ0 तेज सिंह अपेक्षा- 2003 के संत रैदास पर विशेषांक सम्पादकीय ''दलित पुनर्जागरण और रैदास'' में लिखते हैं कि रैदास ने बार-बार सद्गुरु का ज्ञान कहीं दीपक है, कहीं दृष्टि है। ज्ञान और दृष्टि ही मानव को यर्थाथ ज्ञान प्रदान कर सकता है। यही तथागत बुद्ध के सम्यक् दृष्टि और सम्यक् विचार हैं।

गुरु ग्यान दीपक दीया

बाती देइ जलाय।

रैदास गुरु ग्यांन चाषु बिना,

किमि मिटई भ्रम भाय॥

अन्तर्राष्ट्रीय साहित्यकार व चिन्तक कंवल भारती जी रैदास को भ्रातृत्व और श्रम साधना अर्थात् संघर्ष ही मानव को श्रेष्ठ बनाता है, ऐसा उनका चिन्तन है। रैदास ने एक नई और क्रान्तिकारी अर्थवेत्ता प्रदान की है। बुद्धि, विचार, विवेक के बिना सभी अन्धे के समान है। तथागत ने भी तर्क की कसौटी पर परखने की बात कहीं।

जिन देखे घिन उपजै,

नरक कुंड में वास।

प्रेम भक्ति से ऊबरे,

प्रगटत जन रैदास॥

''सामाजिक क्रान्ति के अग्रदूत-संत रैदास'' के लेखक मूर्धन्य विद्वान, चिन्तक व साहित्यकार डॉ0एन. सिंह लिखते हैं कि ''भारतीय संस्कृति अन्तर्विरोधों का विचित्र समन्वय है। इन विषम परिस्थितियों में भी संत रैदास क्रान्तिकारी, समाज सुधारक, दार्शनिक व कवि जैसी विशेषताओं से विभूषित हैं।'' उन्होंने जड़मति समाज को समझाया।

एक माटी के सभै भांडे,

सब का एकै सिरजनहार।

रैदास व्यापै एकौ घट भीतर,

सभ को एकै गढ़े कुम्हार॥

इक्कीसवीं सदी में दर्शानिक, चिन्तक, कवि, समाज सुधारक, निर्गुण प्रेम आदि विशेषताओं के साथ सन्तशिरोमणि प्रवर रैदास की वैचारिक/सांस्कृतिक क्रान्ति हम लोगों के लिए प्रासंगिक है।

सब्बे सत्ता सुखी होन्तु,

सब्बे होन्तु च-खेमीनु।

सब्बे भद्राणि पश्यन्तु,

मा कंचिद दुःखमागमा॥

''तथागत बुद्ध की तरह सामाजिक, धार्मिक एवं पारिवारिक मूल्यों से सम्बन्धित उनके मूल्यों, आदर्शों में पुट, सम्पूर्ण मानव जाति के लिए उपयुक्त है। उन्हें काल, वर्ग, क्षेत्र या अन्य सीमाओं से बाँधा नहीं जा सकता है। वे विश्वगुरु थे और मानवता की सर्वागीण उन्नति ही उनका मुख्य उद्देश्य था। समाज की दशा को देखते हुए उनकी वाणी में बंधुता, समानता, स्वतंत्रता के सर्वोदय का भाव जिस तीव्रता और स्पष्टता से परिलक्षित होता है, उससे उनके वैचारिक महामानव होने का परिदृश्य परिलक्षित है। रैदास के मानवतावादी सन्देश जन-जन तक पहुँचाने की आवश्यकता है।''

सन्त पथ के मर्मज्ञ परशुराम चतुर्वेदी लिखते हैं, ''सभी निर्गुणवादी सन्त उस श्रमण संस्कृति के प्रचारक है, जो बौद्धों की निजी आत्मानुभूति है और जो वेद, शास्त्रों का अनुसरण

नहीं करते हैं।'' सन्तों की वाणियों से यह स्पष्ट है कि वे उस सभ्यता की मानवतावादी क्रान्ति को लाना चाहते थे, जिसे बुद्ध ने ई0पू0 छठवीं शताब्दी में प्रवाहित किया था। श्रमण संस्कृति भारत के मूलनिवासियों की संस्कृति, जो श्रम सृजन, मानव दुःख निवारण, निर्वाण, ज्ञान, ध्यान, योग व प्रज्ञा पर आधारित है। ब्राह्मणी संस्कृति जो भोग, सुख, स्वर्ग-नरक, अन्धविश्वास, शोषण, क्रूर हिंसा, पाप-पुण्य, लोक-परलोक पर आधारित है। सन्तों ने इसे खरिज कर दिया।

'मन ही पूजा मन ही धूप' में ओशो ने लिखा, ''भारत का आकाश सन्तों के सितारों से भरा है। अनन्त सितारे हैं। यद्यपि ज्योति सबकी एक ही है। सन्त शिरोमणि रैदास उन सब सितारों में ध्रुवतारा हैं। इसलिए कि शूद्र के घर में पैदा होकर भी काशी के पंडितों को मजबूर कर दिया स्वीकार करने को। महावीर का उल्लेख नहीं किया ब्राह्मणों ने अपने शास्त्रों में, बुद्ध की जड़े काट डाली, बुद्ध के विचार को उखाड़ फेंका। लेकिन रैदास में कुछ बात है कि क्रान्तिकारी रैदास को नहीं उखाड़ सके और रैदास को स्वीकार भी करना पड़ा।''

वैचारिक क्रान्ति के प्रणेता रैदास ने कहा, ''मन ही सेऊँ सहज स्वरूप।'' तथागत बुद्ध ने धम्मपद की दो गाथाओं में भी यही बात कही, ''जिसका चित्त राग द्वेष आदि से निरपेक्ष विरत व स्थिर है, पाप-पुण्य रहित है, उस पुरुष के लिए भय नहीं है। सन्तों की सुमिरिनी, बौद्धों की स्मृति का ही दूसरा रूप है।'' क्रान्तिकारी रैदास ने बताया कि सिर मुड़ाने, व्रत, पूजा करने, कठिन तपस्या करने, योग, वैराग्य से इच्छाओं का दमन नहीं होता है। यही बात तथागत बुद्ध ने भी अपने धम्मदेशना में बताई कि माया, मोह व तृष्णा में लिप्त मनुष्य की शुद्धि न नगें रहने से, न जटा रखने से, न कीचड़ लपेटने से, न उपवास करने से, न तपती धूप में सोने से, न धूल लपेटने से और न उकडूँ बैठने से होती है। तथागत बुद्ध से भी जबरदस्त प्रहार रैदास कहते है कि ''अरे मन तू अब अमृत देश को चल, जहाँ न मौत है न शोक है और न कोई क्लेश। हे निरंजन निर्विकार मैं आपका जन हूँ। लोक और वेद का खण्डन करके आपकी शरण में आया हूँ।'' मज्झिम निकाय में भी इसी प्रकार की व्याख्या दी है, ''जहाँ प्राणी का आयतन केवल अनन्त आकाश है, जहाँ प्राणी का आयतन केवल विज्ञान है, जहाँ प्राणी का आयतन अकिंचन मात्र कुछ भी नहीं है और जहाँ न संज्ञा है, न आयतन और न नाम रूप।।

महाकारूणिक शान्तिदूत तथागत बुद्ध से लगभग दो हजार वर्षा बाद पैदा हुए क्रान्तिकारी रैदास ने ऊँच-नीच के भेदभाव, अन्धविश्वासों, कुप्रथाओं तथा आडम्बरों के विरोध में ही अपना जीवन बिताया था। उनकी वाणी, उपदेश, ब्राह्मण धर्म के खण्डन के पक्ष में और बुद्ध वचनों के समर्थन पक्ष में है। वस्तुतः रैदास बुद्ध वचनों से इतने प्रभावित थे कि उन्होंने अपने पदों में बुद्ध वचनों को ही समाहित किया। वर्ण और जाति के भेदभाव को समाप्त करने के लिये महामानव बुद्ध के मानवीय एकता के सिद्धान्त को प्रतिपादित किया और कहा कि मनुष्य मात्र की एक ही जाति है। इसमें किसी प्रकार की भिन्नता नहीं है। वर्णव्यवस्था की उच्चता और निम्नता का खण्डन कर एक ही मानव जाति की पुष्टि की गयी है।''

बहुं वे सरणं यन्ति,
पब्बातानि बनानि च।

आराम रूक्ख, चेत्यानि,

मनुस्सा भय ताज्जिता।

तथागत बुद्ध ने कहा अन्धविश्वासों को त्यागो और प्रज्ञा पर आधारित मध्यम मार्ग को अपनाओ। क्रान्तिकारी रैदास ने अन्धविश्वासों को त्यागने का आवाहन किया।''

कहा भयोनाचे अरू, गाये,

का भयो तय कीन्हें।

कहा भयो ये चरण पखारे,

जौ लौ परम तत्व नहि चीन्हें॥

तथागत बुद्ध ने सभी दुःखों का और अन्धविश्वासों क कारण अविद्या बताया। अविद्या से जहाँ प्रज्ञा या सद्ज्ञान का प्रकाश रूक जाता है, तभी दुःखों का जन्म होता है। तथागत ने कहा- ''अविद्या परमं मल्''

क्रान्तिकारी रैदास ने तथागत बुद्ध के उसी वचन को कहा अपने शब्दों में

अविद्या अहित की न,

ताते विवेक दीप मलीन।

तथागत बुद्ध ने कहा था कि काम, क्रोध, मद, लोभ और मोह ऐसे तत्व हैं, जो अविद्या को बढ़ाते हैं। ये मनुष्य की प्रज्ञा में बाधक हैं। क्रान्तिकारी रैदास ने इसलिए इन पाँचों को लुटेरा कहा है-

काम, क्रोध, मद, लोभ, मत्सर इन पाँचों मिले लूटैं।

तथागत बुद्ध ने आलस्य को मनुष्य का शत्रु बताया। आलस्य त्यागकर ही मनुष्य प्रगतिशील, सचेष्ट और प्रयत्नशील हो सकता है।

''अप्पमादों अमत पदं

पमादों मुच्यनों पदं।

अप्पमता न मोयन्ति ये

पमत्ता यथा मता॥''

क्रान्तिकारी रैदास ने तथागत के इन्हीं वचनों को मनुष्यों के सामने बहुत सरल भाषा में रखा-

रैन गंवाई सोई करि,

दिवस गंवायों खाई रे।

हीरा सा तन पाई कर,

कौड़ी बदले जाई रे॥

तथागत बुद्ध ने मृगदाव (ऋषिपत्तन) में पंचवर्गीय भिक्खु को धम्मदेशना देकर धम्म चक्र प्रर्वतन किय। उसी काशी में क्रान्तिकारी रैदास ने राजा वीरसेन के दरबार में पोगापथियों को पराजित किया। क्रान्तिकारी रैदास यदि बौद्ध परम्परा के नहीं होते, तो उन्हें धार्मिक चुनौती नहीं स्वीकारनी पड़ती। सद्गुरु रैदास बौद्ध परम्परा के ही एक बोधिसत्व स्वरूप हैं।

भारत का इतिहास बताता है कि श्रमण संस्कृति के पुरोधा महावीर स्वामी और तथागत बुद्ध के सामने सभी ब्राह्मण संस्कृति के अनुयायी तुच्छ थे। तथागत बुद्ध के उदय से पहले वैदिक धर्म को ब्राह्मण संस्कृति कहा जाता है तथा संतधर्म, जैन धर्म एवं बौद्धों की संस्कृति को श्रमण संस्कृति कहा जाता है। ''सन्त प्रवर रैदास साहब'' में मूंर्धन्य विद्वान व लेखक चंन्द्रिका प्रसाद जिज्ञासु ने लिखा है कि ''दोनों संस्कृतियों की मान्यता में धरती आकाश अथवा पूर्व पश्चिम का अन्तर है।''

श्रमण संस्कृति अंतर्मुखी है और ब्राह्मण संस्कृति बहिर्मुखी है। श्रमण संस्कृति निवृत्ति प्रधान है और ब्राह्मण संस्कृति प्रवृत्ति प्रधान है। श्रमण संस्कृति

संसार को दुःखपूर्ण समझकर इससे विमुक्त होने के लिए प्रत्यनशील है। ब्राह्मण संस्कृति भोगैश्वर्य परायण अर्थात् संसार में भोग चाहती है और मरने के बाद स्वर्गसुख। श्रमण संस्कृति जन्म-मरण को भवबन्धन कहती हुई निर्वाण की कामना रकती है। ब्राह्मण संस्कृति हजार साल की आयु और सुख भोग चाहती है और मरने पर अमर लोक में वास। श्रमण संस्कृति के स्वाभिमानी, योगी, साधु, संत एवं भिक्खु हैं। ब्राह्मण संस्कृति के पंडित, स्वामी, सन्यासी और ऋषि-महर्षि हैं।

श्रमण संस्कृति समता का प्रचार-प्रसार करती है, तो ब्राह्मण संस्कृति विषमता का। श्रमण संस्कृति कर्म से ऊँच-नीच मानती है, तो ब्राह्मण संस्कृति जन्म से। ब्राह्मण संस्कृति वर्णव्यवस्था को ईश्वरीय मानती है, श्रमण संस्कृति वर्ण व्यवस्था को शैतानी प्रपंच। श्रमण संस्कृति वेद, पुराण, उपनिषद, स्मृतियाँ, रामायण, महाभारत, गीता को काल्पनिक आधार प्रदान करती है। ब्राह्मण संस्कृति इनके पक्ष में अपनी बुद्धि गिरवी रखती है। ब्राह्मण संस्कृति की भाषा देव या संस्कृत है। श्रमण संस्कृति की भाषा जनभाषा। श्रमण संस्कृति का आदर्श समाज वह है, जिसमें समानता, भाईचारा, स्वतंत्रता तथा न्याय की पराकाष्ठा है। ब्राह्मण संस्कृति का आदर्श समाज वह है, जिसमें असमानता भाईचारे का अभाव, परतन्त्रता और अभाव, अन्याय, अत्याचार हो। ब्राह्मण संस्कृति में समाज को तोड़कर रखा जाता है, जबकि श्रमण संस्कृति में समाज को जोड़कर रखा जाता है। श्रमण संस्कृति में स्वतंत्र चिन्तन को महत्व दिया जाता है। ब्राह्मण संस्कृति में स्वतंत्र चिन्तन का गला घोटा जाता है। वेद और वेदान्तों की बातों को सही माना जाता है। श्रमण संस्कृति स्वावलम्बन पर आधारित है, ब्राह्मण संस्कृति परावलम्बन पर। ब्राह्मण संस्कृति में वहीं सत्य है, जो वेद कहते है। श्रमण संस्कृति में वह सत्य है, जो अनुभव की कसौटी पर खरा उतरता है। क्रान्तिकारी रैदास इसी श्रमण संस्कृति के हिमायती हैं और जीवनपर्यन्त इसी संस्कृति का प्रचार-प्रसार किये तथा बोधिसत्व के रूप में विख्यात हुये।

प्रवर सन्त रैदास का महापरिनिर्वाण 1520 ई. चित्तौण में हुआ। वह महारानी रतनकुमारी के बुलावे पर चित्तौण गये और राणा सांगा के पुत्र कुँवर भोज के पाणिग्रहण संस्कार में भाग लिया। यह संघर्ष ब्राह्मणवादी व्यवस्था के लोगों को नागवार गुजर रहा था। उन्होंने षड्यन्त्र के द्वारा सन्त रैदास को विष देकर मार दिया और उनके शव को लापता कर दिया। आज भी चित्तौण में प्रवर संत सद्गुरू रैदास के स्मारक के अवशेष मौजूद हैं।

भवतु सब्ब मंगलम् !

आलेख

भूप सिंह भारती
महेनद्रगढ़ (हरियाणा)
मो.: 9416237425

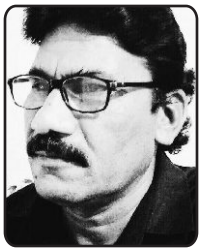

ऐसा चाहूँ राज मैं... बेगमपुरा की संकल्पना

समाज में व्याप्त जाति-पाँति का भेदभाव, छुआछूत, गैरबराबरी, ढोंग-पाखंडों और अन्धविश्वासों जैसी कुरीतियों को दूर करने के लिये समय-समय पर बड़े-बड़े संतो, गुरुओं और कवियों ने अपनी कालजयी रचनाओं से सार्थक प्रयास किये। उन्हीं महान हस्तियों में से संत शिरोमणी गुरु रविदास जी भी एक थे। गुरु रविदास जी बचपन से ही परोपकारी, दयालु एवं निडर प्रवृत्ति के थे। सन्तशिरोमणी गुरु रविदास ने मुक्ति आंदोलन को अपने अनूठे व्यक्तित्व से एक नयी दिशा प्रदान की। उन्होंने अपनी वाणी के द्वारा जातिप्रथा पर, गैरबराबरी पर, पाखण्ड और आडम्बरों तथा उस समय समाज में व्याप्त तमाम कुरीतियों पर कठोर प्रहार किया तथा लोगों को एकता, प्रेम, भाईचारे, सहयोग और बराबरी का पावन संदेश देकर गुलामी की जंजीरों से मुक्ति के लिए प्रेरित किया। उन्होंने अपनी रचनाओं द्वारा एक आदर्श राज्य की परिकल्पना लोगों के सम्मुख प्रस्तुत की, जिसे उन्होंने 'बेगमपुरा शहर' का नाम दिया। उनके बेगमपुरा शहर में हर कोई बिना किसी भेदभाव के, बिना किसी घृण के, बिना किसी दुःख-दर्द के, बिना किसी अपमान के और बिना किसी डर के प्रेम और इंसानियम के साथ आनन्द से शांतिपूर्वक रह सकेगा।

ऐसा चाहूँ राज मैं, जहाँ मिलै सबन को अन्न।
छोटे-बड़े सब सम बसै, रविदास रहैं प्रसन्न॥

गुरु रविदास ने अपने आदर्श राज्य बेगमपुरा में जाति मुक्त समाज की परिकल्पना की। उन्होंने कहा कि आज लोग जात-पात के कुचक्र में फँसे हुए हैं और जातिवाद का भयंकर रोग समाज में फैला हुआ है, जो मानव-मानव में भेद करता है। इसलिए उन्होंने जातिप्रथा पर करारी चोट करते हुए कहा है कि जातिमुक्त समाज ही आदर्श राज्य हो सकता है। गुरु रैदास ने जातिवाद का घोर विरोध किया है।

जात-पात के फर म्ह, उलझ रहे सब लोग।
मानवता को खा रह्या, रविदास जात का रोग॥

गुरु रविदास जी कहते हैं कि जाति समाज की जड़ों में रमा हुआ एक भयानक रोग है। यह समाज की उन्नति में सबसे बड़ी बाधा है। जब तक जाति है, तब तक मनुष्य से मनुष्य जुड़ नहीं पाएगा। अतः आदर्श राज्य जातिविहीन हो।

जाति जाति में जाति है, जो केतन के पात।
रविदास मनुष ना जुड़ सकै, जब तक जाति न जात॥

गुरु रविदास वर्णव्यवस्था और उससे उत्पन्न जातिगत भेदभाव तथा अस्पृश्यता का अपने आदर्श राज्य में खंडन करते हुए कहते हैं कि कोई भी जन्म से नीच या तुच्छ नहीं होता, बल्कि अपने कर्मो से

नीच या तुच्छ बनता है।

रविदास जनम के कारणे,
होत न कोई नीच।
नर को नीच कर डारते,
ओछ करम की कीच॥

गुरु रविदास कहते हैं कि पूजा, कर्मकांड, पाखंड और अंधविश्वास के बिना इन्सार को केवल सत्य कर्म से मानवता की सहज सेवा करनी चाहिए, क्योंकि इस संसार में तो प्रेम, भाईचारा, नैतिकता, मानवता ही सबसे बड़ी सेवा है।

तोडू न पाती, पूजूँ न देवा।
बिन पत्थर, करें रविदास सहज सेवा॥

गुरु रविदास जी कहते हैं कि इस संसार में किसी के अधीन रहना सबसे बड़ा पाप है। इसलिए मनुष्य को कभी गुलाम बनकर नहीं रहना चाहिए। क्योंकि जो गुलाम होते हैं, उनसे कोई प्रेम भी नहीं करता है।

''पराधीनता पाप है,
जान लेहु रे मीत।
रविदास दास पराधीन से,
कौन करे है प्रीत॥''

गुरु रविदास जी कहते हैं कि गुलामों का कोई वजूद भी नहीं होता, कोई उनका कोई दीन ईमान नहीं होता। गुलाम को सभी तुच्छ समझते हैं और हेय दृष्टि से देखते हैं और न ही उससे कोई समता का व्यवहार करता है। गुलामी के दर्द को दर्शाते हुए रविदास जी कहते हैं कि-

''पराधीन का दीन क्या, पराधीन बेदीन।
रविदास पराधीन को, सब ही समझें हीन॥''

गुरु रविदास ने हिन्दू-मुस्लिम संस्कृति में व्याप्त पाखण्ड व आडम्बरों को भी आड़े हाथों लेते हुए कहा कि मेरा बेगमपुरा एक ऐसा आदर्श राज्य है, जिसमें धर्म के नाम पर कोई पाखण्ड नहीं, सब समान होंगे :-

''मंदिर से कुछ घिन नहीं,
मस्जिद से नहीं प्यार।
दुनू में अल्लाह-राम नहीं,
कहै रविदास चमार॥''

गुरु रविदास जी कहते हैं कि मेरे राम दशरथ के पुत्र नहीं हैं। मेरे राम तो मेरे रोम-रोम में ही रमे हुये हैं और सारा संसार उनके लिए तो एक परिवार है और वे सारे जग में ही रमे हैं :-

रविदास हमरो राम जी,
दशरथ सूत है नाहिं।
राम हमऊ मांहि रमि रह्यो,
बिसव कुटम्बह माँहि॥

गुरु रविदास लोगों को तर्क देकर समझाते हैं कि हिन्दू-मुस्लिम में कोई भेद नहीं, सभी खून और माँस से बने हैं। गुरु रविदास ने हिन्दू-मुस्लिम एकता का संदेश दिया :-

''हिन्दू तुरक नहीं कुछ भेदा,
सभी में एक रक्त अर मांसा॥
दोउ एकउ दूजा नाहिं,
पेख्यो सोई भगत रविदासा॥''

गुरु रविदास जी कहते हैं कि गुणहीन ब्राह्मण को आदर मत दो। गुणवान लोगों को ही मान दिया जाए, चाहे वो निम्न जाति का ही क्यों न हो। गुरु रविदास के बेगमपुरा शहर में जाति के आधार पर नहीं, कर्म के आधार पर श्रेष्ठ है :-

''रविदास बामण ना पूजिये,
जो होवै गुणहीन।
पूजो चरण चंडाल के,
जो हो शील प्रवीण॥''

गुरु रविदास ने जाति को नहीं कर्म और सत को

गुरु रविदास जी के आदर्श राज्य में व्यर्थ के ढोंग, पाखण्डों को कोई जगह नहीं। वे कहते हैं कि मेरा भगवान न तो मथुरा में निवास करता है, न द्वारका में, न ही काशी और हरिद्वार में। उसे खोजना तो व्यर्थ है। उसे खोजना है, तो अपने अंदर खोजें। वो मन के अंदर ही रहता है, क्योंकि मेरा मालिक तो

श्रेष्ठ बताया है :-

रविदास सत मत छोड़िये,
जो लग घट मै प्रान।
दूसर कोई धरम नाहिं,
जग म्ह सत समान॥

मेरे मन में रहता है :-

का मथुरा का द्वारका,
का काशी हरिद्वार।
रैदास खोजा दिल आपना,
ताहि मिला दिलदार॥

गुरु रविदास अपने आदर्श राज्य (बेगमपुरा) में लोगों को काम करने की प्रेरणा देते हुए कहते हैं कि काम करने में सदा ही लगे रहना, परन्तु उसके बदले में जो आपको मजदूरी मिलनी है, उसकी आशा कभी भी नहीं छोड़नी है। क्योंकि काम करना मनुष्य का धर्म है, यह बात मैं आपको सच बता रहा हूँ।

''करम बंधन में बन्ध रहियो,
फल की ना तज्जियो आस।
कर्म मानुष का धर्म है,
सत भाखै रैदास''॥

गुरु रविदास ने अपनी वाणी और रचनाओं से समाज में एक नयी चेतना का संचार किया। उन्होंने समाज में फैली असमानताओं और कुरीतियों को दूर करने के लिए अनेक मधुर व रसीली कालजयी रचनाओं के द्वारा एक आदर्श राज्य 'बेगमपुरा शहर' की परिकल्पना लोगों के समक्ष रखी। उन्होंने अपने राज्य में समानता, प्रेम, भाईचारा, सहयोग, कर्म की श्रेष्ठता और शिक्षा पर बल दिया। उन्होंने गरीब लोगों को कर्म करके अपने पैरों पर खड़े होने की सीख दी। उन्होंने लोगों से पाखण्ड और अन्धविश्वास को त्यागकर सच्चाई के पथ पर आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया। उनके द्वारा दिखाया गया बेगमपुरा शहर कुछ और नहीं, आज का कल्याणकारी राज्य ही है। गुरु रविदास का दर्शन अपने आप में विशद है, जिसका अनुसरण आज भारत ही नहीं, पूरा विश्व कर रहा है।

गुरु रविदास के आध्यात्मिक दर्शन से प्रभावित होकर मीराबाई ने उन्हें अपना गुरु बनाया और उनकी शिक्षाओं को आगे जन-जन तक पहुँचाया।

''गुरु मिलिया रविदास जी,
दीनी ज्ञान की गुटकी।
चोट लगी निजनाम हरि की,
म्हारे हिवड़े खटकी॥''

उनके समकालीन क्रांतिकारी समाज सुधारक कबीरदास ने उनको संतो में शिरोमणि बताया। सन्त शिरोमणि गुरु रविदास ने समाज में फैली विषमताओं को दूर करने का सीधा और सरल उपाय अपने आपा को मारना बताया। वे कहते थे कि पाखण्ड और आडम्बर ही धर्म के पतन का कारण हैं। कहीं जाने की जरूरत नहीं, बस अपना कर्म सच्ची निष्ठा से करो और सबसे प्यार करो।

तज अभिमान मेट आपा पर,
पिपिलक हवै चुनि खावै॥''

गुरु रविदास ने हमेशा अपने अनुयायियों को सिखाया कि कभी धन के लिए लालची मत बनो। धन कभी-स्थायी नहीं होता। इसके बजाय आजीविका के लिए कड़ी मेहनत करो। मेहनत का फल मीठा होता है। गुरु रविदास की जयंती पर लोग उनके गीतों, दोहों को सुनते, सुनाते और गाते हैं। उनकी भव्य झाँकी निकालकर उनके द्वारा दी गयी शिक्षाओं का प्रचार-प्रसार करते हैं। भंडारा करके एक-दूजे का मुँह मीठा करते हैं। लेकिन गुरु रविदास के आदर्श राज्य की परिकल्पना तभी परिपूर्ण होगी, जब देश में समता, स्वतंत्रता, न्याय, भाईचारा, प्रेम और वैज्ञानिक सोच होगी। डॉ. भीमराव आंबेडकर ने भारत का संविधान बनाकर गुरु रविदास के आदर्श राज्य की संकल्पना को साकार करने का सार्थक प्रयास किया। अब जरूरत यह है कि संविधान को नेक-नीयत से लागू किया जाए। ताकि देश को एक कल्याणकारी राज्य बनाया जा सके, जो गुरु रविदास की एक आदर्श राज्य की संकल्पना थी।

आलेख

डॉ. मुकुन्द रविदास
सहायक प्राध्यापक
विनोद बिहारी महतो कोयलांचल विश्वविद्यालय, धनबाद।
profmravidas@gmail.com

संतन में संत रविदासा

संपूर्ण भारत वर्ष में जिन महान संतों का नाम बड़े आदर व सम्मान के साथ लिया जाता है, संत 'रविदास' उनमें प्रमुख हैं। 'संत' का तात्पर्य ही होता है- सत्य में विश्वास करने वाला अथवा जिसे सत्य का अनुभव हो गया हो तथा जिसकी कामनाएँ शांत हो चुकी हैं। संत कवियों में एक विशेषता होती है कि वे अपने विषय में बहुत कुछ नहीं कहते हैं, बल्कि इनके जीवन के विषय में जनश्रुतियाँ ही काफी मिल जाती है।

कृतियाँ-

संत रविदास की कृतियों में से 'रविदास जी की वाणी' तथा 'गुरु ग्रंथ साहिब' ही प्रमुख है। संत रविदास जी के समकालीन संत थे- धन्ना, कबीरदास, नानक जी तथा मीराबाई जो कि इनकी शिष्या भी थी। संत रविदास जी के विभिन्न नाम थे। वे समाज-सुधार एवं जनजागरण के लिए विभिन्न प्रदेशों में यात्राएँ किया करते थे और उसी के अनुकूल उनके नामों में विभिन्नता पायी जाती है। जैसे- बंगाल में रोहिदास, राजस्थान में रैदास, महाराष्ट्र में रोहिदास आदि नामों से जाने जाते हैं।

जन्म-स्थान-

ऐतिहासिक दृष्टि से संत रविदास जी के जन्मस्थान मुख्य रूप से तीन माने जाते हैं- राजस्थान, गुजरात, बनारस। चित्तौड़ में कुंभन दास मंदिर के पास संत रविदास जी की छतरी आज भी विद्यमान है। गुजरात के मढ़ोगढ़ में रविदास जी का कुंड एवं कुटी की प्राप्ति हुई है। बनारस के विषय में यह धारणा है कि संत रविदास जी चंद्रवंशी चमार जाति में बनारस के समीप मंडूर नामक गाँव में जन्मे थे, जो कि पश्चिम बनारस छावनी के ग्रांड ट्रक रोड पर अवस्थित है तथा इनका जन्म माघ पूर्णिमा सं. 1433 दिन रविवार को हुआ था। इसके आधार पर ही इनका नाम रविदास (रैदास) रखा गया था। इनका परिनिर्माण 1579 विक्रम संवत दिन बुधवार को हुआ था। रविदास जी लगभग 140 वर्ष तक जीवित रहे थे। संत रविदास जी ने अपने गाँव, नाम तथा जाति के बारे में स्वयं कहा है कि-

मांडुर नगर लीन अवतारा, रविदास शुभ नाम हमारा,
जाति ओछी पाती ओछी
ओछा जन्म हमारा
राजा राम की सेव न कीन्हों,
कवि रविदास चमारा।

ठीक उसी प्रकार जन्म के विषयों में एक पद और भी स्पष्ट है कि-

चौदह सौ तैंतीस की,
माघ सुदी पन्दरास।
दुखियों के कल्याण हित,
प्रकटे गुरु रविदास।

परिवार-

इनके पिता का नाम रघु, माता का नाम कर्मा देवी, पत्नी का नाम लोना देवी एवं एक पुत्र विजय दास था। इनका विवाह बहुत ही छोटी सी उम्र में हो गया था। पत्नी लोना देवी बहुत ही सुशील और सरल स्वभाव वाली व धर्म की मूर्ति थी। विवाह होने के बावजूद भी रविदास जी साधना में लीन रहा करते थे। गृहस्थ जीवन तथा उनके आध्यात्मिक जीवन और विकास में कभी भी उनकी पत्नी बाधक नहीं बनी। रविदास जी निरक्षर थे, चूँकि उस युग में छुआछूत का इतना बोलबाला था कि उस काल में निम्न जाति के लोगों के बच्चों को पाठशाला में पढ़ना वर्जित था। अतः अतः संत रविदास जी ने अपने मन को ही हरि का पाठशाला बना लिया था। वह बचपन से ही संत प्रवृत्ति के तो थे। उनके बारे में कहा जाता है कि बारह वर्ष की आयु में ही मिट्टी की राम-जानकी अर्थात् राम-सीता की मूर्ति बनाकर नित्य दिन पूजा पाठ करने लगे थे। पैतृक व्यवसाय में इनकी रूचि तो थी, लेकिन आलौकिकता की तरफ इनका पूरा झुकाव था। इसलिए संत रविदास जी की इस विरक्त भाव को देखकर उनके पिता ने ताडना, प्रताड़ना करना आरंभ कर दिया था। लेकिन इन सब चीजों का उन पर कोई भी प्रभाव नहीं पड़ा। तत्पश्चात उनके पिताजी ने उदासीन होकर इन्हें विवाह बंधन में बाँध दिया। पारिवारिक बंधनों में बँध करके भी रविदास जी का मन प्रकृति की ओर ही उत्तरोत्तर बढ़ता गया। वह निराभिलाषी और त्यागी प्रकृति के संत कहे जाते थे। एक बार की बात है कि एक साधु उनको पारस मणि पत्थर रखने के लिए देकर गया था साधु ने कहा कि यह पारस मणि पत्थर है, इसे रख दीजिए। तब रैदास जी ने कहा था कि ''इसे मेरे छप्पर में रख जाओ। मैं इसका क्या करूँगा? '' कहा जाता है कि जब तेरह माह के बाद वह साधु पुनः उनकी कुटिया में आये, तब उन्होंने रविदास जी से उस पत्थर के विषय में पूछा। तब रविदास जी ने कहा था कि जहाँ रखकर गए थे, वहीं पर रखा होगा। इस संदर्भ में उनकी एक वाणी बहुत ही प्रसिद्ध है-

माधवे पारस मणि लेई जाऊ,
मोहि सोने का नहीं चाउ।
जो मेरे पै राम दयाला, दिऊ घी, नून, दाला।

स्पष्ट है कि संत रविदास जी एक आत्मसंतोषी व्यक्तित्व के धनी थे। उन्हें सांसारिक वस्तुओं की अभिलाषा नहीं थी। यही कारण है कि संत रविदास जी की प्रसिद्धि दिन-ब-दिन दूर-दूर तक फैलती गयी, जिससे पीडित समाज का झुकाव उनकी तरफ दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही गया। उन्होंने मन, वचन और कर्म से अपने को निराकार सत्ता से जोड़ लिया था। उनके मुख से जो भी वाणी निकलती थी, वह धीरे-धीरे सिद्ध होने लगी थी। अपनी वाणी में उन्होंने स्वयं कहा भी है कि-

अब कैसे छूटे नाम रट लागी,
प्रभु जी तुम चंदन हम पानी,
जाकी अंग-अंग बास समानी,
प्रभु जी तुम स्वामी हम दासा
ऐसी भक्ति करे रविदासा।''

संत रविदास जी की आज समाज में हमें क्यों याद आती है? संत रविदास जी का व्यक्तित्व सचमुच, सच्चे अर्थों में स्वच्छ, बेदाग था एवं उनका सारा जीवन परोपकार के लिए समर्पित था। 'सारा जीवन-उच्च विचार' उनका परम लक्ष्य ही था। उन्होंने अपने समय की विषमताओं से डंके की चोट से सामना किया था और व कभी भी घबराये नहीं थे। संत रविदास जी स्पष्ट वक्ता थे। वे अपनी वाणी में स्पष्ट रूप से 'चमार' कहा करते थे। कभी भी उन्होंने अपनी जाति को नहीं छुपाया। उनकी वाणी की

पंक्तियों में भी यह स्पष्ट दिखता है-

रविदास जन्म के करने,
होत ना कोउ नीच।
नर कु नीच करि डारि है,
ओछे कर्म की कीच।''

समतावादी सोच-

उनकी वाणियों में समाज के हर वर्ग तथा सभी व्यक्ति के लिए सुख की कामना की भावना देखने को मिलती है। उनकी यह पंक्ति काफी प्रसिद्ध है-

ऐसा चाहूँ राज मैं, जहाँ मिले सबन को अन्न।
छोटे बड़ो सब सम बसें,
रविदास रहें प्रसन्न।

यात्राएँ करने और लगातार सत्संग करने से एवं शास्त्रार्थ चर्चा करते रहने के कारण रविदास जी के ज्ञानचक्षु में परिपक्वता तथा उनके शास्त्रज्ञान में परिपूर्णता और विचारों में परम ज्ञानियों जैसी गंभीरता भी आ गयी थी। इस सत्संग, स्वाध्याय एवं श्रवण का परिणाम यह हुआ कि रविदास जी भी गंभीर प्रवचन करने लगे थे, जिसे सुनने के लिए दूर-दूर से लोग आने लगे थे। इनकी प्रसिद्धि, ख्याति को सुनकर व पूजित होते देखकर उच्च वर्ग के लोग उनसे ईर्ष्या, द्वेष करने लगे थे। यहाँ तक कि एक चमार द्वारा धर्मोपदेश के कार्य को धर्मविरूद्ध कहकर भी काशी के नरेश वीरसिंह देव बघेला से शिकायत की गयी थी। राजा ने रविदास जी एवं उनके विराधियों को दरबार में बुलावा भेजा और दोनों का वाद-विाद करवाया गया। कहा जाता है कि ब्राह्मण लोग पराजित हो गये थे। संत रविदास जी के द्वारा वैदिक परंपरा के अनुकूल विचारों को सुनकर राजा वीरसिंह देव बघेला काफी प्रभावित भी हुये थे एवं विरोधी ब्राह्मणों को काफी फटकार लगाया था।

जनश्रुतियाँ-

संत रैदास जी के बारे में बहुत सारी जनश्रुतियाँ प्रचलित हैं। उन जनश्रुतियों में से एक जनश्रुति यह भी है कि गुरु रविदास जी चित्तौड़ आने पर प्रतिदिन भजन-कीर्तन व्यास नदी पर बैठकर किया करते थे और लोगों को धर्मोपदेश दिया करते थे, जो सवर्ण ब्राह्मणों को असह्य लगा। एक दिन ब्राह्मणों के विरोध ने कुछ उग्र रूप धारण कर लिया तथा धर्मोपदेश देते हुए रविदास से कहा गया कि व्यास नदी पर बैठकर उपदेश नहीं दे सकते। यह कहकर विघ्न डाल रहे थे। जनश्रुति है कि संत रविदास जी उसी समय गद्दी से उठकर खड़े हुये और उन्होंने अपना वक्ष चीरकर यज्ञोपवीत दिखाकर अपने को ब्राह्मण होने का परिचय दिया था। उस समय दिव्य यज्ञोपवीत की सूर्य जैसी ज्योति चारों ओर चमक उठी थी। सभी दर्शक उस दिव्य ज्योति को देखकर चकाचौंध रह गये थे। दिव्य ज्योति के विलुप्त होने के साथ ही संत गुरु रविदास जी का शरीर भी अदृश्य हो गया था। लोग उनकी कुटिया के समीप पहुँचे, तो उन्होंने देखा कि उनकी पत्नी लोना भी अंतर्ध्यान हो चुकी थीं। वहाँ केवल उनके चरण-चिन्ह ही शेष रह गये थे।

मीराबाई अपने इस गुरु के पवित्र चरण-चिन्ह को चिरस्थायी स्मृति बनाये रखने के लिए उसी कुटिया पर एक छतरी बनवा दी थीं। गुरु रविदास जी का स्मारक, रविदास जी की छतरी तथा रविदास जी के चरण-चिन्ह चित्तौड़ में आज भी विराजमान हैं, जो उनके श्रद्धालुओं के लिए एक तीर्थ स्थान बन गया है। अतः संत कबीरदास जी ने ठीक ही कहा था कि - ''संतन में संत रैदासा''।

नोट- ये लेखक के निजी विचार हैं।

आलेख

सतनाम सिंह
हिमाचल प्रदेश

गुरु रविदास की क्रांतिकारी वाणी और उसकी प्रतिक्रिया

गुरु रविदास जी की पाखंड विरोधी वाणी को पढ़-सुन कर काशी का ब्राह्मण समाज तिलमिला उठा। पंडे-पुरोहित इस लिए भी जल भुन रहे थे कि यह चमार हमारी नकल करता है। उपदेश-सत्संग करता है। इसलिए भी तिलमिला रहे थे कि रविदास जी ने ब्राह्मणों के कर्मकांडों की बौद्धों की तरह ही निंदा करनी शुरू कर दी थी। ब्राह्मण समुदाय कबीर जैसे फक्कड़ से पहले ही परेशान था, अब रविदास नाम की एक और आफत उन्हें परेशान करने लगी थी। पंडों को अपना दुश्मन बनाने के लिए उनका निम्नलिखित उपदेश ही काफी था-

माथे तिलक हाथ जप माला,
जग ठगने कूं स्वांग बनाया।

मारग दाँड़ि कुमारग डहकै,
सांची प्रीत बिनु राम ना पाया॥

देहरा अरु मसीत मंहि,
रविदास न सीस नवांय।

जिह लौं सीस निवाबना,
सो ठाकुर सभ थांय॥

मस्जिद सों कछु घिन नहीं,
मंदिर सों नहीं पिआर।

दोउ मंह अल्लाह राम नहीं,
कह रविदास चमार॥

''तिलक दीयौ पै तपनि न जाई,
माला पहरी घणेरी लाई।''

पांडे! हरि विचि अंतर डाढ़ा।
मूंडे मुडावै सेवा पूजा,
भ्रम का बंधण गाढ़ा॥

माला तिलक मनोहर बानौ,
लागो जम की पासी।

जो हर सेती जोडया चाहौ,
तौ जग सों रहौ उदासी॥

''ब्राह्मण अरु चंडाल मंहि,
रविदास न अंतर जान''

ब्राह्मण खत्री बैस सूद,
सभन की इक जात।

रविदास ब्राह्मण मति पूजिए,

जउ हौवे गुण हीन।
पूजिहिं चरन चंडाल के,
जउ हौवे गुण परवीन॥
भाई रे! राम कहां है मोहि बताओ
सत्तिराम ताकौ निकट न आयो

राम कहत सब जगत भुलाना

सो यहु राम न होई।
करम अकरम करुनामै केसी,
करता नांव सुं कोई।।

रविदास हमारो राम जी

दशरथ करि सुत नांहि।
राम हमउ मंहि रमि रह्यो
विसब कटंबह मांहि।।

का मथुरा का द्वारिका,

का कासी हरिद्वार
रविदास खोजा दिल अपना,
तउ मिलिया दिलदार

ऐसी पाखंड विरोधी वाणी से, पाखंड रचाकर अपनी जीविका चलाने वाले धर्म के पिट्ठू चिढ़ उठे। ब्राह्मण वैसे भी चमार जाति के रविदास जी को उपदेश-सत्संग करने का अधिकारी नहीं मानते थे। तंग आकर ब्राह्मणों, काशी के राजा के पास फरियाद की कि वे रविदास चमार को धर्मोपदेश देने से रोकें, क्योंकि मनुस्मृति चमारों को यह अधिकार नहीं देती। रविदास जी को राज दरबार में बुलाया गया। ब्राह्मणों ने कहा, महाराज यह चामर धर्म विरुद्ध आचरण कर रहा है। रविदास जी ने विनम्रता से कहा, महाराज! सभी प्राणी कुदरत की संताने हैं। सभी को उसका सुमिरन करने का अधिकार है। यह जाति व्यवस्था स्वार्थी लोगों की देन है-

रविदास इस ही नूर ते,
जिमि उपज्यो संसार।
ऊंच-नीच किह विध भये,
बाह्मन अरु चमार।।

''रविदास जन्म के कारणै,
होत न कोउ नीच''

इतिहास में ऐसा जिक्र है कि राजा विवेकवान थे। वे रविदास जी के उपरोक्त वचनों से सहमत हुए। उन्होंने इस विवाद का हल खोजने के लिए एक मूर्ति मंगवाकर उसे दरबार में रख दिया। एक तरफ ब्राह्मण थे। दूसरी तरह गुरु रविदास तथा उनके कुछ शिष्य थे। राजा ने कहा, दोनों फरियादी अपनी-अपनी साधना से इस मूर्ति को अपनी तरफ आकृष्ट करें। मूर्ति जिसकी तरफ स्वयं चली जाए, वही साधना का असली हकदार होगा।

ब्राह्मणो ने मंत्रों द्वारा लाख प्रयत्न करके मूर्ति को बुलाया, लेकिन मूर्ति उनकी तरफ नहीं गई। अब रविदास जी की बारी थी। रविदास जी ने अत्यंत भाव-विभोर होकर यह पद गाया-

ऐसी जनि करि हो महाराज।
दूरी मांही तुम बइठै देखो,
गिरत है यौ काज।।

काच कधिर पतित हमते हो,

नैनन देखो आज।
खल हल कासी लोग बहु आए,
देखन भक्ति समाज।।

बिरद तजो कै बिरद संभारौ,

कह रविदास चमराज।।

लोगों की धारणा है कि रविदास जी की इस भावपूर्ण पुकार को सुनते ही मूर्ति उनकी गोद में बिराजमान हो गई। संत पलटू साहब की वाणी में भी इस घटना का वर्णन है-

नहाते त्रिकाल रोज पंडित अचारी बड़े।
सदाा पट बसतर सूत अंग न लगाई है।।

पूजा नैबेद आरती करते हम विधि विधान।

चंदन औ तुलसी भलीभांति से चढ़ाई है।।

हारे हम कुलीन सब कोटि-कोटि कै उपाय।
कैसे तुम ठाकुर हम अपने हूँ न पाई है।।

पलटू दास देखो रीझ मेरे साहब की।
गए हैं कहाँ जब रविदास ने बुलाई है।।

इतिहास में इस घटना का भी जिक्र है कि रविदास जी का पक्ष लेने के जुर्म में इन पलटू साहब को ब्राह्मणों ने जलाकर मार डालने की कुटिल चेष्टा की थी। इन्होंने रात को उनकी झोपड़ी में आग लगा दी थी। पलटू साहेब किसी तरह बच गए थे, परंतु उनकी झोंपड़ी जलकर राख हो गई थी।

प्रचलित है कि उपरोक्त घटना में ब्राह्मणों ने रविदास जी को नीचा दिखाने के लिए एक शर्त भी जोड़ दी थी कि जो पक्ष पराजित होगा, वह विजेता को पालकी में बिठाकर बाजार में घुमाएगा। इस शर्त के अनुसार ब्राह्मणो को रविदास जी को पालकी में बिठाकर अपने कंधों पर उठाकर काशी में घुमाना पड़ा था। पूरे काशी नगर में गुरु रविदास जी की जय-जयकार गूंज उठी थी। रविदास जी ने भी अपनी वाणी में इस घटना का संकेत दिया है-

ऐसी लाल तुझ बिनु कउनु करै।
गरीब निवाजु गुसाईआं मेरा माथै छत्र धरै।।

जाकि छोति जगत कउ लागै ता पर तुहीं ढरै।
नीचह ऊच करै मेरा गोविंदु, काहु ते न डरै।।

नाम देव कबीरु तिलोचनु,
सधना सैनु तरै
कहि रविदास सुनहु रे संतहु,
हरि जीउ तै सभै सरै।

इसी प्रकार प्रचलित जन धारणा है कि एक अन्य चुनौती ब्राह्मणों ने रविदास जी को दी थी कि वे अपने द्वारा पूजित मूर्ति को गंगा में तैराकर उसी सच्चाई सिद्ध करें। गुरु रविदास जी ने विनम्र भाव से कहा कि वे मूर्ति पूजा के विरोधी हैं। मेरे लिए तो साधारण शिला ही शालिग्राम है। कहते हैं कि रविदास जी ने अपनी शिला को गंगा में तैराकर दिखा दिया था। इस चुनौती का संकेत भी रविदास जी की वाणी में उपलब्ध है-

बापुरो सति रैदास कहै रे।
ग्यांन चिारी चरन चित लावै,
हरि कै सरनि रहै रे।।
पाती तोड़ै पूजि रचावैं,
तारन तिरन कहैं रे।
मूरति मांहि बसै परमेसुर,
तौ पानी मांहि तिरै रे।।

तुलसीदास तिलमिला उठे-

ब्राह्मणों की रविदास जी के प्रति बढ़ती हुई कटुता के प्रमाण स्वयं तुलसीदास के 'चतुर्भुजी' काव्य में भी देखे जा सकते हैं। रामचरित मानस के उत्तरकांड में वे लिखते हैं-

जे बरनाधम तेलि कुम्हारा।
स्वपच किरात कोल कलवारा।।

नारि मुई गृह संपत्ति नासी।
मूंड मुंडाई होई सन्यासी।।

अर्थात तेली, कुम्हार, चांडाल, भील, कोल, कलवार आदि नीच वर्ण स्त्री के मरने या घर में संपत्ति के नष्ट हो जाने पर सिर मुंडवाकर संन्यासी बन जाते हैं। वैसे तुलसी दास खुद क्यों संन्यासी बने थे, इसे तो पूरा भारत जानता है। लेकिन खैर उंगली तो दूसरों

की तरफ ही उठाई जाती है न।

ब्राह्मणों को अपनी शर्त हारने पर जब गुरुजी को पालकी उठाकर शहर भर में घुमाना पड़ा था, तभी चिढ़कर तुलसी दास ने लिखा होगा-

''ते बिप्रन्ह सन आपु पुजवाहि''

अर्थात वे स्वयं को ब्राह्मणों से पुजवाते हैं। कौन जाने उन पालकी उठाने वालों में एक कंधा तुलसी दास का भी रहा हो।

एक अन्य स्थान पर तुलसीदास रविदास जी की घोर निंदा करते हुए लिखते हैं-

ब्रह्म ग्यान बिनु नारि नर,
कहत न दूसरी बात।
कौड लागि लाभ बस,
करहि बिप्र गुरघात॥
बादहिं सूद्र द्विजन्ह सन,
हम तुमसे कछु घाटि।
जानई ब्रह्म तो विप्रवर,
आंखि देखावहिं डाटि॥

अर्थात ये शूद्र ब्राह्मणों से विवाद करते हैं। साथ में यह भी कहते हैं कि हम तुमसे किसी भी तरह से कम नहीं हैं। वे हमें डांटकर आंखे दिखाते हुए कहते हैं। जो ब्रह्म को जानता है, वही ब्राह्मण है।

युगपुरुष गुरु रविदास जी जब वेदों की तीव्र आलोचना करते हुए कह रहे थे-

जग में वेद वैद्य मानीजै।
इनमें और अकथ कुछ औरे,
कहौ कौन पर कीजै।
भोजल व्याधि असाधि प्रबल अति,
परम पेय न गहीजै।
पढ़े सुने कुछ समुझि न परई,
अनुभव पद न लहीजै।
चरण विहिन करतारि चलतु,
तिनहि न अस भुज दीजै।
कह रविदास तत्तु बिन,
सब मिलि नकर परीजै।

अर्थात संसारी दुखों को दूर करने के लिए वेदों को वैद्य कैसे माना जाए। इनमें ऐसा है ही क्या? अकथनीय तत्त्व तो कुछ ओर ही है। भवसागर का रोग तो बड़ा भयंकर है। यह वेद मार्ग पर चलने से नहीं, बल्कि श्रेष्ठ मार्ग पर चलने से ही ठीक होगा...।

रविदास जी की ऐसी वेद विरोधी वाणी सुनकर ही तिलमिलाए तुलसीदास लिखते हैं-

'नहिं मान पुरान न वेदहिं'

(जो वेद पुराणों को नहीं मानते)

कहहि ते वेद असम्मत बानी।
जिन्ह के सूझ लाभु नहि हानि॥

आगे तुलसी दास यहाँ तक कह देते हैं-

श्रुति संभत हरि भक्ति पथ,
संजुत बिरति विवेक।
तेहि न चलहिं नर मोह बस,
कल्पहिं पंथ अनेक॥

अर्थात वेद सम्मत तथा वैराग्य और ज्ञान से मुक्त जो हरि भक्ति का मार्ग है, मोहवश ये (रविदास जैसे) उस पर नहीं चलते और अनेकों पंथों की कल्पना करते हैं।

तुलसीदास की यह उलूल-जलूल वाणी रविदास जी के विरोध में ही कही गई है, इसका बड़ा स्पष्ट सा

प्रमाण है। एक स्थान पर गुरु रविदास जी लिखते हैं-

रैदास ब्राह्मण मत पूजिए, जउ हौवे गुणहीन।
पूजहि चरण चंडाल के, जउ हौवे गुन प्रवीन।

तुलसीदास तो हमारे संतों और गुरुओं की करनी-धरनी पर पानी फेरकर ब्राह्मणवाद अर्थात मनुवाद को स्थापित करने के जुगाड़ में लगे रहे। इसलिए तिलमिलाए तुलसीदास को गुरुजी की यह बात नागवार गुजरी। उन्होंने पलटवार करते हुए कह डाला-

''पूजिय विप्र सील गुन हीना,
सुद्र न गुण ज्ञान प्रवीना।''

सूरदास जी तिलमिला उठे-

रविदास जी तथा अन्य निर्गुणियां संतों के प्रति सूरदास ने भी तुलसी दास जैसी अशिष्ट भाषा का प्रयोग किया है। बल्कि मैं तो कहूंगा कि सूरदास तो तुलसीदास से भी चार कदम आगे निकल जाते हैं। इसके लिए सूरदास का भ्रमरगीत देखा जा सकता है। इसमें वे गोपियों के माध्यम से उद्धव की तरफ संकेत करते हुए निर्गुणियां संतों को खूब खरी-खोटी सुनाते हैं। तुलसी दास ने अछूत संतों को कहा था-

नारि मूई घर संपत्ति नासी।
मूंड मुंडाए भए सन्यासी॥

इसी के सुर में सुर मिलाते हुए सूरदास जी कहते हैं-

योग सिखें ते रांडे।

यह देखकर एक बात जो स्वीकारनी ही होगी कि रविदास जी और उनके हमसहरी संतों के खिलाफ राममार्गी और कृष्णमार्गी सभी ब्राह्मण एकजुट हो गये थे। सूरदास निर्गुणियां संतों की शिक्षाओं को 'बकवास' कहते हैं-

''सूर वृथा बकवाद करत हौ''

वे उनकी शिक्षाओं को **''धुर ही तें खोटो''** कहते हैं।

यहां उल्लेखनीय है कि 'धुर' से सूरदास का तात्पर्य है? इससे यही भाव प्रकट होता है कि यह धुर शब्द हमसहरी संतों के मूल बौद्ध धर्म को संबोधित है। जाहिर सी बात है कि बौद्धों के खिलाफ भी ब्राह्मणों ने ऐसे ही शब्दों का इस्तेमाल किया है। सूरदास तो संतों की शिक्षा को ठगी का माल कहते हैं-

''योग ठगोरी यहां न बिकैहों''

उनकी नजर मे तो योग जहर की बेल है-

''योग जहर की बेली''

भ्रमर को लक्ष्य करके एक स्थान पर उन्होंने संतों को नीच कह डाला है। यही नहीं, वे तो मां की गाली देने पर ही उतारु हो गए हैं-

सूर श्याम तजि और भजे जो
ताकि जननी छार।

इस प्रकार हम देखते हैं कि रविदास जी के साथ ब्राह्मणों की उत्तरोत्तर ठनती ही चली गई। यही कटुता कालांतर में गुरु रविदास जी की हत्या का कारण भी बनी।

आलेख

देवचंद्र भारती 'प्रखर'
असिस्टेंट प्रोफेसर
हिंदी विभाग, हरिनंदन स्नातकोत्तर महाविद्यालय
मोहरगंज (चंदौली) उत्तर प्रदेश
मो.: 9454199538

संत रविदास के काव्य में बौद्ध चिंतन

संतकवि रविदास जी के जीवन परिचय और उनकी विचारधारा के विषय में विद्वानों में पर्याप्त मतभेद है। हिंदू विद्वान उन्हें एक हिंदू भक्त के रूप में प्रस्तुत करते हैं, जबकि बौद्ध विद्वान उन्हें बौद्ध विरासत का पुरोधा कहते हैं। संत रविदास जी के पंथ का अनुसरण करने वाले लोग उनके नाम पर 'रविदासिया धर्म' की स्थापना कर चुके हैं। रविदासिया धर्म का अनुपालन करने वाले उन्हें देवता की तरह पूजते हैं, लेकिन उन्हें एक भक्त मानते हैं। यह विचित्र विडंबना है कि एक भक्त एक देवता भी है। वास्तव में, 'रविदासिया धर्म' का केवल नाम ही अलग है, जबकि वह हिंदू धर्म की ही एक शाखा है, क्योंकि उसकी समस्त विचाराधारा हिंदू धर्म के समान है। ध्यातव्य है कि रविदासिया धर्म के लोग बौद्ध धम्म के प्रति असंतोष प्रकट करते हैं, जबकि बौद्ध धम्म के सिद्धांत विज्ञान पर आधारित हैं और सार्वभौमिक सत्य के अत्यधिक निकट हैं। यदि संत रविदास जी की कविताओं का सम्यक मूल्यांकन किया जाए, तो उनकी मूल विचारधारा बुद्ध की वाणी के समान सिद्ध होती है। डॉ0 सूरजमल सितम जी ने अपनी पुस्तक 'बोधिसत्व गुरु रविदास और उनके आंदोलन' में बुद्ध-वाणी और रविदास-वाणी में समानता सिद्ध किया है। डॉ0 सितम जी के अनुसार, **''भगवान बुद्ध ने मन के महत्व पर अधिक जोर दिया है, इसलिए धम्मपद ग्रंथ की शुरूआत ही मन से की गई है- 'मनो पुब्बंगमा धम्मा मनोसेट्ठा मनोमया/मनसा चे पसन्नेन भासति वा करोति वा/ततो नं सुखमन्वेति छाया व अनपायिनी' अर्थात जब व्यक्ति स्वच्छ मन से बोलता व कार्य करता है, तब सुख उसके पीछे-पीछे वैसे ही हो लेता है, जैसे कभी साथ न छोड़ने वाली उसकी परछाई उसके हाथ रहती है।''**

इसी प्रकार संत रविदास जी ने भी मन की पूजा अर्थात् मन को निर्मल करने और साधने का विचार प्रकट किया है। यथाः

मन ही पूजा मन ही धूप।
मन ही सेऊँ सहज स्वरूप ॥

बाबा साहेब डॉ0 भीमराव आंबेडकर जी ने अपनी पुस्तक 'बुद्ध और उनका धम्म' में लिखा है, **''जाति-पॉति के लिए संघ में कोई स्थान न था। सामाजिक स्थिति का संघ में कोई स्थान न था। संघ के भीतर सभी सदस्य समान थे। संघ के अंदर छोटे-बड़े का निर्णय सदस्य के गुणों से होता था, न कि उसके जन्म से। जैसा तथागत ने कहा था कि संघ एक समुद्र के समान है और भिक्षु नदियों के समान हैं, जो समुद्र में विलीन हो जाती हैं।''**

तथागत बुद्ध ने कहा- ''जाति मा पुच्छ चरणं पुच्छं।'' अर्थात् जाति मत पूछो, आचरण पूछो। इसी प्रकार संत रविदास जी ने भी कहा हैः

रविदास जन्म कै कारनै, होत न कोऊ नीच।
नर कू नीच करि डारि है, ओछे करम कौ कीच॥

तथागत गौतम बुद्ध ने सारनाथ में पाँचों ब्राह्मण परिव्राजकों को उपदेश देते हुए सफल और कल्याणकारी जीवन के आठ मार्ग बताये, जिसे अष्टांगिक मार्ग कहा जाता है। अष्टांगिक मार्ग हैं- सम्यक दृष्टि, सम्यक संकल्प, सम्यक वाणी, सम्यक कर्मांत, सम्यक आजीविका, सम्यक व्यायाम, सम्यक स्मृति और समाधि। राहुल सांस्कृत्यायन ने ठीक प्रयत्न (सम्यक व्यायाम) का स्पष्टीकरण करते हुए लिखा है, **''इंद्रियों पर संयम, बुरी भावनाओं को रोकने तथा अच्छी भावनाओं के उत्पादन का प्रयत्न, उत्पन्न अच्छी भावनाओं को कायम रखने का प्रयत्न - ये ठीक प्रयत्न हैं।**

सम्यक व्यायाम जैसी उक्ति का प्रयोग संत रविदास जी ने भी अपने एक पद में किया है। यथाः

सो कहा जाने पीर पराई।
जाकी दिल में दरद न आई॥

स्वरूपचंद्र बौद्ध जी ने अपनी पुस्तक 'बौद्ध विरासत के पुरोधा गुरु रविदास' में लिखा है, **''बुद्ध वचन को समय-समय पर हजारों विद्वानों ने भिक्खु-संघ की सम्मिलित संगीति-सभाओं में समयानुसार संशोधित किया और सुत्त या शब्द-रटंत (कंठस्थ) के आधार पर प्रतिष्ठित ज्ञान की समपुष्टि की गयी। परिणामतः इस ज्ञान में गतिशीलता आयी ओर विचार व विमर्श को महत्व मिला। यही गतिशीलता और विश्वास आगे चलकर विभिन्न यानों के रूप में पल्लवित हुआ। हीनयान, महायान, वज्रयान और सहजयान इसकी क्रमबद्ध कड़ियाँ हैं।''**

सहजयान ही परिणत होकर नाथपंथ और संत-परंपरा का रूप ग्रहण कर लिया। इस प्रकार संतों की वाणी में उनकी पूर्व परंपरा की विचारधारा समाहित है। राहुल सांस्कृत्यायन ने बौद्ध दार्शनिक नागार्जुन के शून्यता-दर्शन को स्पष्ट करते हुए लिखा है, **''आचार्य ने बतलाया है कि जो शून्यता को समझता है, वह प्रतीत्य-समुत्पाद (विच्छिन्न प्रवाह के तौर पर उत्पत्ति) को समझ सकता है। प्रतीत्य-समुत्पाद समझने वाला चारों आर्य सत्यों को समझ सकता है। चारों सत्यों के समझने पर उसे तृष्णा-निरोध (निर्वाण) आदि पदार्थों की प्राप्ति हो सकती है। प्रतीत्य-समुत्पाद जानने वाला जान सकता है कि क्या धर्म है, क्या धर्म का हेतु और क्या धर्म का फल है? वह जान सकता है कि अधर्म, अधर्म हेतु अधर्म फल क्या है? क्लेश (चित्त-मल), क्लेश-हेतु, क्लेश-वस्तु क्या है? जिसे यह सब मालूम है, वह जान सकता है कि क्या है सुगति या दुर्गति? क्या है सुगति-दुर्गति में जाना, क्या है सुगति-दुर्गति में जाने का मार्ग, क्या है सुगति-दुर्गति से निकलना तथा उसका उपाय। शून्यता से नागार्जुन का अर्थ है- प्रतीत्य-समुत्पाद। विश्व और उसकी सारी जड़-चेतन वस्तुएँ किसी भी स्थिर, अचल तत्व से बिल्कुल शून्य हैं। अर्थात् विश्व घटनाएँ हैं, वस्तु-समूह नहीं।''**

बाबा साहेब डॉ0 भीमराव आंबेडकर ने अपनी पुस्तक 'बुद्ध और उनका धम्म' में लिखा है,

''बौद्ध 'शून्यता' का मतलब सोलह आने निषेध नहीं है। इसका मतलब इतना ही है कि संसार में जो कुछ है, वह प्रतिक्षण बदल रहा है।''

वास्तव में, शून्यवाद का सिद्धांत अनित्यता के सिद्धांत का ही परिवर्तित रूप है। संतकवि रविदास जी अपने एक पद में कहते हैं कि अब मैं हार चुका हूँ। लोक-वेद की बड़ाई करके, दोनों तरह से (हाल-चाल) थक चुका हूँ। नाचते-गाते और सेवा-पूजा करके भी थक चुका हूँ। काम क्रोध से शरीर थक चुकी है; और दूसरी बात क्या कहूँ? अब तो मै न ही रामजन हो पाता हूँ, न हीं भक्तजन हो पाता हूँ और न ही देवताओं के पैर पखारता हूँ। मैं जो-जो भी करता हूँ, उससे और भी सांसारिक बंधनों में बँधता जाता हूँ। पहले तो मैं ज्ञान का दीपक जलाया, फिर उसे बुझा दिया। सुन्न सहज (शून्य साधना) में मैंने दोनों को छोड़ दिया। अब मैं न ही राम कहता हूँ, न ही खुदा कहता हूँ। मैंने ज्ञान-ध्यान (पूजा-पाठ) दोनों छोड़ दिया है। अब तक मैं जिसके लिए दौड़ता फिरता था, मैंने उसे अपने ही भीतर पा लिया है। अब मेरी पाँचों इंद्रियाँ मेरी सहेली बन गयी हैं। उन्होंने मुझे असली निधि को बता दिया है। अब मैं इस संसार में रहकर ही प्रसन्न रहता हूँ और अब वह (शून्य) भी मेरे अंदर समा गया है। रविदास जी कहते हैं कि अब वह (शून्य) मुझे सहज रूप में सम्मुख दिखाई देता है। रविदास जी ने सोहम् (सः+अहम्) अर्थात् 'वह से मैं की ओर,' बाहर से भीतर की ओर' के साधना-रूप को स्वीकार किया। इस प्रकार की साधना तथागत गौतम बुद्ध के शून्यवाद के निकट है। अवलोकनार्थः

अब मैं हार्यो रे भाई।
थकित भयो सब हाल-चाल थैं,
लोकन वेद बड़ाई।।
थकित भयो गाइण अरु नाचण,
थाकी सेवा पूजा।
काम क्रोध थै देह थकित भई,
कहूँ कहाँ लो दूजा।।
राम जन होऊँ ना भगत कहाऊँ,
चरण पषालूं न देवा।
जोई जोई करूं उलटि मोही बांधे,
ताथे निकट न भेवा।।
पहली ज्ञान का किया चांदना,
पीछे दीया बुझाई।
सुन्ना सहज में दोऊ त्योग,
राम कहूँ न खुदाई।।
हरै बसे खटक्रम सकल अरू,
दूरिब कीन्हें सेऊ।
ज्ञान ध्यान दोउ दूरी कीए,
दूरिब छाड़ि तेऊ।।
पंचू थकित भए जहाँ-तहाँ,
जहाँ-तहाँ थिति पाई।
जा कारण में दौरो फिरतौ,
सो अब घट में पाई।।
पंचू मेरी सखी सहेली,
तिन निधि दई बताई।
अब मन फूलि भयो जग महिया,
उलटि आपो में समाई।।
चलत-चलत मेरो निजमन थाकौ,
सब मोपै चलो न जाई।
सोई सहज मिलो सोइ सन्मुख,
कहै रैदास बताई।।

भद्रशील रावत, श्याम सिंह और स्वरूपचंद्र बौद्ध आदि बौद्ध विद्वानों ने संत रविदास

जी को बौद्ध विचारधारा का पोषक सिद्ध किया है। भद्रशील रावत जी ने 'संत रविदास वाणी में बौद्ध चिंतन' नामक अपनी पुस्तक में संत रविदास जी की वाणी में बौद्ध-चिंतन का सम्यक विवेचन किया है। श्याम सिंह जी ने अपनी पुस्तक 'संत रविदास जी की मूल विचारधारा' में संत रविदास जी की मूल विचारधारा को बौद्ध विचारधारा के रूप में विश्लेषित किया है। स्वरूपचंद्र बौद्ध जी ने तो 'बौद्ध विरासत के पुरोधा गुरु रविदास' नामक पुस्तक लिखकर उन्हें बौद्ध विरासत का पुरोधा घोषित कर दिया है। अतः रविदास जी के काव्य का गंभीरतापूर्वक अध्ययन करने से स्पष्ट है कि उनके काव्य में बौद्ध-चिंतन का विपुल प्रभाव है।

संदर्भ-

1. बोधिसत्व गुरु रैदास और उनके आंदोलन : डॉ0 सूरजमल सितम, पृष्ठ 117-118
2. मध्ययुगीन काव्यः संपादक डॉ. सत्यनारायण सिंह, पृष्ठ 140, प्रकाशक- विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी, संस्करण 2014
3. बुद्ध और उनका धम्मः डॉ. भीमराव आंबेडकर, पृष्ठ 241, प्रकाशक- बुद्ध और उनका धम्म सोसायटी आफ इंडिया नागापुर, संस्करण 2011
4. बौद्ध विरासत के पुरोधा- गुरु रैदास : स्वरूपचंद्र बौद्ध, पृष्ठ 123, प्रकाशक- सम्यक प्रकाशन नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण 2008
5. बौद्ध दर्शन : राहुल सांस्कृत्यायन, पृष्ठ 23-24, प्रकाशक- किताब महल नई दिल्ली, पहला संस्करण 1943
6. मध्ययुगीन काव्यः संपादक डॉ. सत्यनारायण सिंह, पृष्ठ 141, प्रकाशक- विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी, संस्करण 2017
7. बौद्ध विरासत के पुरोधा - गुरु रैदास : स्वरूपचंद्र बौद्ध, पृष्ठ 17, प्रकाशक- सम्पक प्रकाशन नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण 2008
8. बौद्ध दर्शन : राहुल सांस्कृत्यायन, पृष्ठ 23-24, प्रकाशक- किताब महल नई दिल्ली, पहला संस्करण 1943
9. बुद्ध और उनका धम्म : डॉ. भीमराव आंबेडकर, पृष्ठ 149, प्रकाशक- बुद्ध और उनका धम्म सोसायटी ऑफ इंडिया नागपुर, संस्करण 2011
10. मध्ययुगीन काव्यः संपादक डॉ. सत्यनारायण सिंह पृष्ठ 139, प्रकाशक- विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी, संस्करण 2017

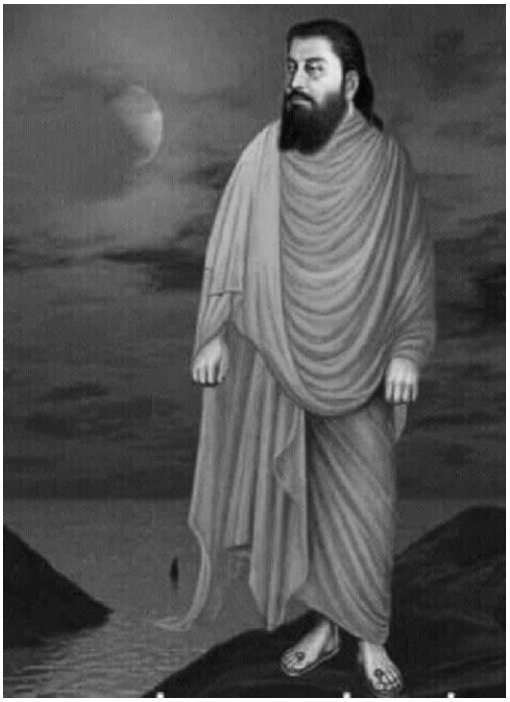

आलेख

डॉ. चमन लाल
दिल्ली

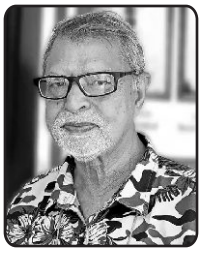

गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित गुरु रविदास वाणी

बेगमपुरा शहर को नाउ

बेगमपुरा शहर को नाउ।
दुख अन्दाहु नहीं तिही ठाउ॥
ना लसवीस खिराजु न मालु॥
खउफु न खता न तरसु जवालु॥1॥
अब मोहि खूब वतन गह पाई॥
ऊहाँ खैरि सदा मेरे भाई॥1॥रहाउ॥
काइमु दाइमु सदा पातिसाही॥
दोम न सोम एक सौ आही॥
आबादानु सदा मसहूर॥
ऊहाँ गनी बसहि मामूर॥2॥
तिउ तिउ सैल करहि जिउ भावै॥
महरम महल न को उटकावै॥
कहि रविदास खलास चमारा॥
जो हम सहरी सो मीतु हमारा॥

शब्दार्थ : बेगमपुरा = गम के बगैर, अशोक नगर। अन्दोहु = अंदेशा, चिंता। तसवीस = सोच। खिराजु = कर। जवालु = पतन। काइमु दाइनु = स्थिर। दोम न सोम = दूसरा न तीसरा। गनी = धनी। मामूर = संपन्न। महरम = राज़दान। खलास = मुक्त।

भावार्थ : शहर का नाम बेगमपुरा है, जहाँ दुःख और चिंता के लिए कोई जगह नहीं है। न वहाँ माल है, न कर देने की सोच, न वहाँ खौफ है, न भूल या पतन का डर। अब मैंने खूब अच्छा वतन ढूँढ लिया है। मेरे भाई वहाँ हमेशा सुख-शांति है।

वहाँ की पातशाही (सत्ता) हमेशा स्थिर रहने वाली है। वहाँ कोई दूसरा-तीसरा नहीं है, सब एक समान हैं। वह शहर हमेशा आबाद और प्रसिद्ध है। वहाँ संपन्न धनी बसते हैं।

वहाँ जैसे भी किसी का मन चाहता है, घूमते रहते हैं। महल का कोई राज़दान उन्हें रोकता नहीं है। बंधन मुक्त चमार रविदास कहते हैं कि जो हमारे शहर का निवासी है, वही हमारा मित्र है।

विशेष : रविदास वाणी में इस पद का केन्द्रीय महत्त्व है। इस पद में गुरु रविदास द्वारा एक ऐसे वर्ग-शोषण मुक्त समाज की कल्पना की गई है, जिसे उस समय के सन्दर्भ में यूटोपिया कहा जा सकता है। लेकिन इस यूटोपिया से गुरु रविदास की दूर-दृष्टि का पता चलता है।

आसा

माटी को पुतरा कैसे नचतु है॥
देखै देखै सुनै बोलै दउरिओ फिरतु है॥1॥रहाउ॥
जब कछु पावै तब गरबु करतु है॥
माइआ गई तब रोवनु लगतु है॥1॥
मन बच क्रम रस कसहि लुभाना॥
बिनसि गइआ जाइ कहूँ समाना॥2॥
कहि रविदास बाजी जगु भाई॥

बाजीगर सउ मोहि प्रीति बनि आई।।3 ।।6 ।।

शब्दार्थ : बाजी = खेल। बिनसि = विनाश।

भावार्थ : मिट्टी का पुतला कैसे नाच रहा है? कभी इधर-उधर देखता, सुनता, बोलता, दौड़ता फिर रहा है। जब कुछ मिल जाता है, तो अहंकार करता है। माया चली जाए, तो रोने लगता है।

मन, बचन और कर्म तीनों से रसों का लोभी हो रहा है। जब विनाश होगा, तब पता नहीं कहाँ जाकर समाएगा।

रविदास जी कहते हैं कि हे भाई! यह संसार का खेल है। मेरी इस खेल के बाजीगर (निराकार प्रकृति) से प्रीति हो गई है।

गुजरी

दूधु त बछरै थन बिटारिओ

फूलु भवरि जलु मीनि बिगारिओ।।

माई गोबिंद पूजा कहा लै रावउ।।

अवरु न फूलु अनूप न पावउ।।1 ।।रहाउ।।

मैलागर बेहरे है भुइअंगा।।

बिखु अंम्रित बसहि इस संगा।।2 ।।

धूप दीप नइबेदहि बासा।।

कैसे पूज करहि तेरी दासा।।3 ।।

तनु मनु अरपउ पूजा चरावउ।।

गुरुप्रसादि निरंजनु पावउ।।4 ।।

पूजा अरचा आहि न तोरी।।

कहि रविदास कवन गति मोरी।।5 ।।

शब्दार्थ : बिटारिओ = अपवित्र करना। चरावउ = चढ़ावा। भुइअंगा = साँप। नाइबेदहि (नैवेद्य) = मूर्ति के आगे रखी जाने वाली खाने की वस्तु। मैलागर = चंदन।

भावार्थ : बछड़े ने दूध को स्तन से ही अपवित्र (जूठा) कर दिया। फूल को भँवरे ने और जल को मछली ने बिगाड़ दिया। हे भाई! गोबिंद (निराकार प्रकृति) की पूजा में मैं क्या भेंट चढ़ाऊँ? और सुच्चा फूल नहीं है, सो मुझे अनूप (निरंकार) की प्राप्ति न होगी?

चन्दन के इर्द-गिर्द साँप लिपटे हैं, समुद्र में अमृत और विष एक ही स्थल पर रहते हैं। तुम्हारे दास तुम्हारी पूजा, धूप-दीप, नैवेद्य और सुगन्धि से कैसे करें?

अपना तन और मन पूजा में अर्पित कर चढ़ा दूँ, तो गुरुकृपा से निरंजन (निराकार) मिलेगा? तुम्हारी पूजा और अर्चना के लिए मेरे पास कुछ नहीं है। रविदास कहते हैं, मेरी गति क्या होगी?

सोरठि

चमरटा गाँठि न जानई।।

लोगु गठावै पनही।।1 ।।रहाउ।।

आर नहीं जिह तोपउ।।

नहीं रांबी ठाउ रोपउ।।

लोगु गँठि खरा बिगूचा।।

हउ बिनु गाँठे जाइ पहूचा।।2 ।।

रविदास अपै राम नामा।।

मोहि जम सिउ नाही कामा।।3 ।।3 ।।

शब्दार्थ : पनही = जूतियाँ।

भावार्थ : चमार को गाँठने की जाँच आती नहीं, लोग जूतियाँ गठाने आ जाते हैं। टाँका (तोपा) लगाने की आर नहीं है, न ही रंबी है, जिससे टाकी लगा सकूँ।

लोग गाँठते-गाँठते खूब खराब हुए। हम बिना गाँठे ही जा पहुँचे।

रविदास जी कहते हैं कि मैं राम (निर्गुण) का नाम जपता हूँ, मुझे अब यम से कोई काम (वास्ता) नहीं है।

मलार

नागर जनां मेरी जाति खिखिआत चंमारं।।

रिदै राम गोबिंद गुन सारं।।1 ।।रहाउ।।

सुरसरी सललक्रित बारुनी रे संत जन करत नहीं पानं।।

सुरा अपवित्र न त अवर जल रे सुरसरी मिलत नहि होई आनं।।1 ।।

तर तारि अपवित्र करि मानीअै रे जैसे कागरा करत बीचारं।।

भगति भागउतु लिखिअै तिह ऊपरे पूजीअै कर नमस्कारं।।2 ।।

मेरी जाति कुट बांढला ढोर ढोवंता नितहि बानारसी आस पास।।

अब बिप्र परधान तिहि करहि इंडउति

तेरे नामि सरणाई रविदास दासा।।3 ।।1 ।।

शब्दार्थ : सुरसरी = गंगा। सलल = जल। बारुनी = खराब। सुरा = शराब। न त = नहीं तो चाहे। तर तारि = ताड़ वृक्ष। कागरा = कागज। कुट बाँढला = काटने वाला, चमार।

भावार्थ : हे नगर जनो! मेरी जाति चमार के रूप में प्रसिद्ध है। मेरे हृदय में राम बसा है और मैंने गोबिंद (निराकार प्रकृति) के गुण धारण किए हैं। यदि गंगाजल से शराब बनी हो, तो भी संत जन उसे नहीं पीते। लेकिन यदि कभी शराब या अपवित्र जल गंगाजल में जा मिले, तो वह नहीं रहता अर्थात् गंगाजल ही बन जाता है।

जैसे ताड़ वृक्ष अपवित्र माना जाता है, लेकिन जरा ख्याल करो कि उसके कागज बनाए जाते हैं और उन पर भगवत भक्ति लिखी जाती है, तो उन (कागजों) को नमस्कार किया जाता है।

मेरी जाति चमार है, नित्य बनारस के आस-पास मरे पशु ढोता था। अब दास रविदास ने तुम्हारे नाम की शरण ली है, तो बड़े-बड़े ब्राह्मण आकर डंडौत करते हैं।

कविता व ग़ज़ल

देवचंद्र भारती 'प्रखर'
वाराणसी, उत्तर प्रदेश
मो.: 9454199538

गुरु रविदास पचासा

सतगुरु के सत्ज्ञान से, कुंठित मति गतिशील।
मन की माया शून्य हो, काया बने सुशील।।

संत शिरोमणि नाम है, धाम अमल अविकार।
महिमा गुरु रविदास की, अमित अनूप अपार।।

(दोहा छंद)

जय रविदास आस के दानी
जय गुरुवर जय हो वरदानी
हे दीनों के सच्चे दाता
तुमसे यह जीवन सुख पाता

जब चौदह सदी उदासी
तुम बालक बन आए काशी
माघ महीने की पुनवासी
झूम उठे काशी के वासी

रघुनंदन कर्मा के लाला
मंडुवाडी में बचपन पाला
सीरकरहियाँ धाम तुम्हारा
सुखदायक है नाम तुम्हारा

संत शिखर तुमने मन साधा
अपनी इच्छाओं को बाँधा
ढोंगी सब तुमको उलझाये
तुम उनकी उलझन सुलझाये

राजा बीर सिंह हरसाया
जब तुमसे हर उत्तर पाया
तुमने उसका भरम मिटाया
वेदों का हर भेद बताया

नीच किसी की जाति नहीं है
झूठे ने यह बात कही है
चर्चित है तुम्हारी बानी
पंडित वह है जो है ज्ञानी

क्या है तिलक जनेऊ पोथी
शील बिना सब चीजें थोथी
सच में पंडितराज तुम्हीं हो
गुरुओं के सिरताज तुम्हीं हो।

बिंदु मिले तो बनती रेखा
अंधेरे में किसने देखा
यज्ञ हवन से क्या होता है
चारों ओर धुआँ होता है

कथन तुम्हारा सिद्ध सही है
वचन अभी प्रसिद्ध वही है
सूखा सुमन नहीं खिलता है
घी जलता तो जी जलता है

संगम पर लगता है मेला
अमृत पाने का है खेला

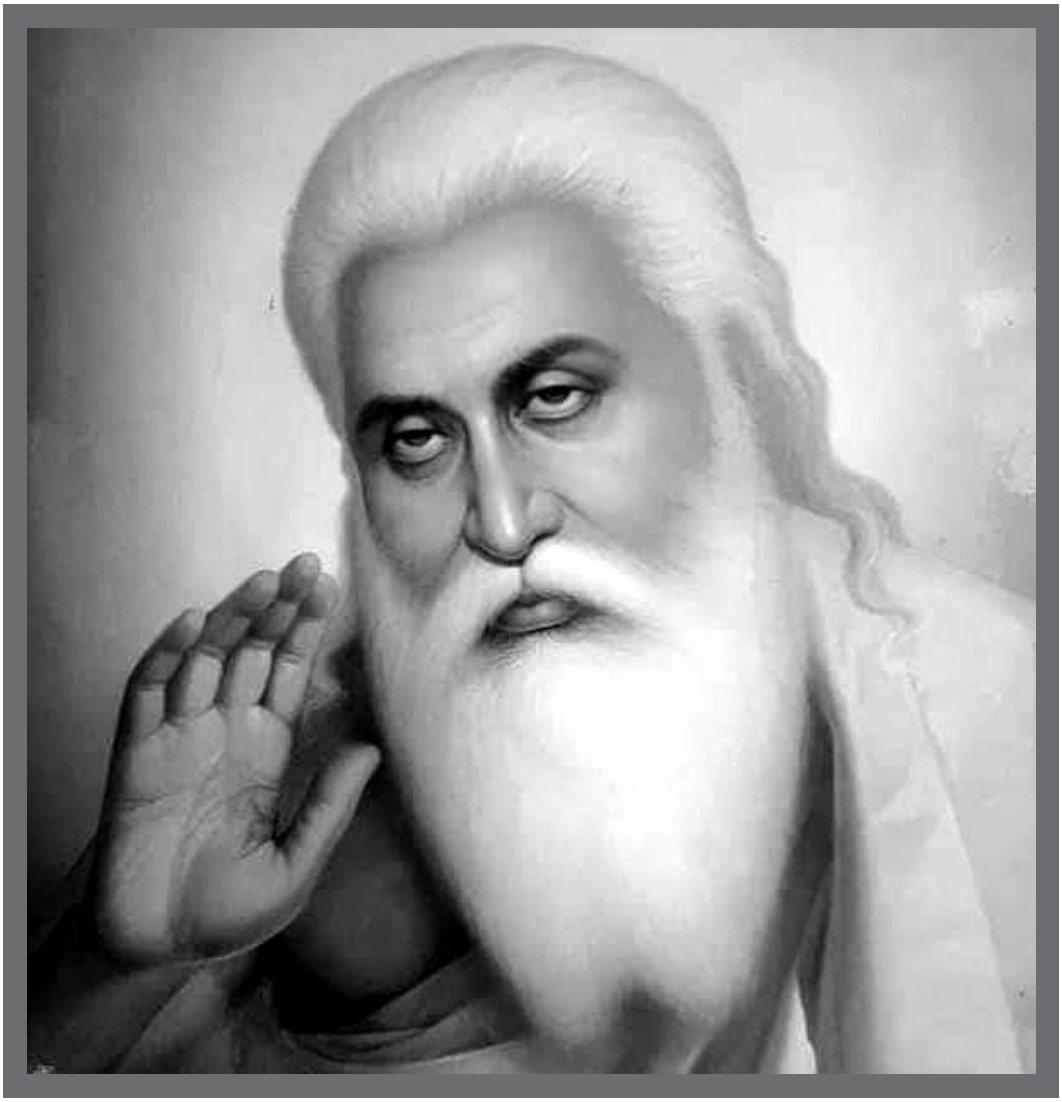

कुंभकथा है बहुत पुरानी
लोगों की जानी पहचानी

लेकिन तुमने कहा निरंतर
यह तो केवल आडंबर
बूँद गिरी थी अगर सुधा की
तो अब है माटी वसुधा की

संत कबीर लहरतारा में
नामी निर्गुण की धारा में
वाद विवाद हुआ तब जाने
संत शिरोमणि तुमको माने

आस्तिक सगुण और निर्गुण हैं
नास्तिक जैसा तुममें गुण है
ईश्वर शब्द भरम की छाया
जग सच्चा है ईश्वर माया

भारत में था मुस्लिम शासन
दिल्ली पर लोदी का आसन
जहाँपनाह सिकंदर लोदी
इस्लामी था सगुण बिरोधी

दासों ने जब खबर सुनाया
लोदी अपना होश गँवाया
जब तुमने उसको समझाया
तब वह अपना शीश झुकाया

संत अनोखे थे गुरु नानक
काशी में आ गये अचानक
भेंट हुई तुमसे तो बोले
खुलकर मन की बातें खोले

पश्चिम-पूरब अंत मिले थे
जिस दिन दोनों संत मिले थे
तुमने उनको ऐसा जीता
भूल गये वह भगवत गीता

किनाराम नाम से नागा
तुमसे बाँधे मन का धागा
चंचल मन के छंद तुम्ही हो
सच में परमानंद तुम्हीं हो

सूर रहीम बिहारी क्या हैं
तुम हीरा हो सब ताँबा हैं
तुलसी हैं कवियों में नामी
तुम कवियों के सच्चे स्वामी

राणा सांगा राजस्थानी
झाली बाई उसकी रानी
नाम तुम्हारा सुनकर आई
तुमको भी चित्तौड़ बुलाई

उसके आदर की परछाईं
पुत्रवधू थी मीरा बाई
मीरा ने जब तुमको जाना
उसने तुमको गुरुवर माना

आंबेडकर जब परिचय पाये
प्रथम जयंती वह मनवाये
बहुजन अब भी रीत निभाएं
जन्म दिवस हर साल मनाएं

हिंदू सिक्ख बौद्ध जन सारे
बोलें तुम्हारे जयकारे
जीवन-चरित विचित्र तुम्हारा
घर-घर में है चित्र तुम्हारा

राह तुम्हारी जो भी आए
राहें जीवन की वह पाए
जो भी तुम पर ध्यान लगाए
उसका ध्यान विमल हो जाए

जो पढ़ता रविदास पचासा
उसके मन से मिटे निराशा
गुरु कीर्तन 'प्रखर' को प्यारा
अमर रहे गुरु प्रेम हमारा

मन चंगा ये हो गया, और नहीं कुछ आस।
पत्नी जननी तात सहित, हृदय बसें रविदास।।

(चौपाई छंद)

राम मनोहर राव के दोहे, ग़ज़ल और कविता

दोहे

छः सौ साल लगभग भये, जन्में थे रविदास।
मध्यकाल में वे रहे, शिष्य मीरा ख़ास।।

भविष्य बनता वर्तमान, वही बने फिर भूत।
ईश्वर होने का यहाँ, मिलता नहीं सबूत।।

प्रसन्न सब जग में रहें, दुःखी रहे नहिं कोय।
मानव मानव होय सम, उँच-नीच नहिं होय।।

काम क्रोध मद लोभ मोह, पाँच लुटेरे जान।
हाड़ माँस के सब बने, सबै बराबर मान।।

समतावादी थे गुरु, श्रमण संस्कृति भाय।
घोर विरोधी ढोंग के , मानवता उपजाय।।

समतामूलक समाज का, भारत हो पर्याय।
बुद्ध रविदास आंबेडकर, सबकी एक ही राय।।

कविता

थे संत प्रवर रैदास निर्गुणवादी और निराकार।
दुष्प्रचार कठौती से कंगनका, किये नहिं चमत्कार।
हुए साढ़े छह सौ साल सीर गोवर्धनपुर काशी में।
जन्म लेत रविदास, रघु-करमा के स्वप्र हुए साकार।

हो आडम्बर कुरीतियाँ धर्म-जाति भेदभाव से त्रस्त।
पैतृक पेशा छोड़ बने संत, सुने पिता की दुत्कार।

मानव-मानव एक सम, समतामूलक बने समाज।
जाति-धर्म से ऊँच-नीच को कहा प्रबल विकार।

काम क्रोध मद लोभ मोह, पाँचों लूटे मानव को।
श्रवण संस्कृति के हिमायती, रहे श्रमिक पुचकार।

बेगमपुरा की चाहत दुःखी रहे न प्राणी जग में।
शिष्य बने तमाम काशीनरेश तक किये सत्कार।

हुए कुपित सवर्ण चित्तौड़ के सुन उनके उपदेश।
कर दी हत्या सद्गुरु की, उन लोगों को धिक्कार।

सब रहे प्रसन्न लोक कल्याण की भावना ऐसी।
रविदास-वाणी में बुद्ध उपदेश मनोहर जग-उपकार।

ग़ज़ल

हाथ पैर नाक मुँह आँख सबके एक समान,
फ़र्क कहाँ फिर, क्या हिन्दु क्या मुसलमान।

रज़-बीज मिलन से उपजे इंसान उसी तरह,
कह के गए रविदास, मानव-मानव एक समान।

जन्म से न हो कोई ऊँच-नीच, होते करम बड़े,
जन्म समय नहिं धर्म-जाति, होते एक समान।

शिक्षा से हों ज्ञानवान, जीते अज्ञानी पशुवत,
राम रहीम एकै ना नाम, मुल्ला पंडित हैरान।

जीवहत्या कतई ठीक नहीं, जीवन अनमोल,
नशा करौ न कोई सा, नशा बना दे बेईमान।

काम क्रोध मद लोभ मोह, सब इंसान को लूटें,
जो पाँचों विकार तजे, सदाचारी वही महान।

डॉ0 राम मनोहर राव
बरेली

एस0एन0 प्रसाद की कविता

सन तेरह सौ अठानवे में,
माघ पूर्णिमा का दिन खास।
काशी के मंडुआडीह में थे,
जन्में परम् सन्त रविदास।

जाति चमार पिता थे रघु,
कर्मा उनकी माता थीं।
पत्नी लोना से घर सज्जित,
गृह-कार्य की ज्ञाता थी।

कर्मकांड रूढ़ियाँ आडम्बर
हिंसा चारों ओर हताशा।
लोगों पर प्रतिबंध हजारों
व्याप्त चतुर्दिक घोर निराशा।

सामाजिक सम्बन्धों का था
रूप घिनौना दुसह क्लेश।
पीड़ित जन को सन्त शिरोमणि
देते रहे विविध सन्देश।

गुण से हीन न ब्राह्मण पूजो
पूजो नीच जाति गुणवान।

सन तेरह सौ अठानवे में,
माघ पूर्णिमा का दिन खास।
काशी के मंडुआडीह में थे,
जन्में परम् सन्त रविदास।

जाति चमार पिता थे रघु,
कर्मा उनकी माता थीं।
पत्नी लोना से घर सज्जित,
गृह-कार्य की ज्ञाता थी।

कर्मकांड रूढ़ियाँ आडम्बर
हिंसा चारों ओर हताशा।
लोगों पर प्रतिबंध हजारों
व्याप्त चतुर्दिक घोर निराशा।

सामाजिक सम्बन्धों का था
रूप घिनौना दुसह क्लेश।
पीड़ित जन को सन्त शिरोमणि
देते रहे विविध सन्देश।

गुण से हीन न ब्राह्मण पूजो
पूजो नीच जाति गुणवान।
पूजा पाठ भरम है मन का
व्यर्थ झूठ का करना मान।

मठ मंदिर शोषण के साधन
खोज स्वयं में निज अस्तित्व।
वाणी विमल और उर निर्मल
परहित से निखरे व्यक्तित्व।

मिले सभी को अन्न बराबर
भूखे प्यासे रहें न लोग।
पत्थर की मूरत खाती कब
लगा रहे क्यों उनको भोग?

पण्डे और पुजारी मिलकर
झूठे लोभ दिया करते हैं।
चमत्कार का भ्रम फैलाकर
लूट खसोट किया करते हैं।

निज तत्व ज्ञान से विज्ञों को
कई बार पराजित उन्होंने किया।
जो रहे उपेक्षित वंचित गण
रविदास ने सबको मान दिया।

एस.एन. प्रसाद
लखनऊ

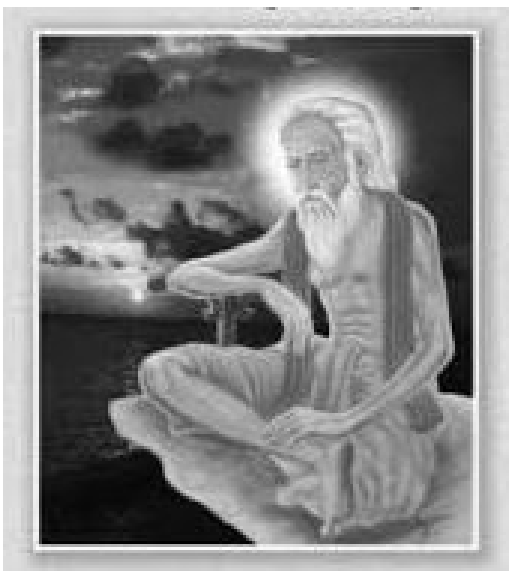

सूरजपाल की कविता
संत रविदास

ढोंग और पांखण्ड से
रविदास को अलग करके।
न समझ सके वे एक पल
तार्किक मानव हो करके।

तन मिला, मन मिला,
मिला सर्व जगत का सार।
बुद्धि मिली, ज्ञान मिला,
मिला संत रविदास का साथ।।

एक संत को द्विजों ने जोड़ा,
अपने कर्मकाण्डों के साथ।
पूर्वजन्म का ब्राह्मण बताया,
जबकि किये वे हक की बात।

रविदास सा संत है होना
मानो मानवता का साथ।
जिसने की थी समता और
प्रेम की हरदम बात।।

वामन ने उनको सगुण राम
से जोड़ किया पांखण्ड।
खुद को घिरता देख वामन

ऐसा झूठा रचे प्रपंच।।

न सगुण ठाकुर राम, वामन,
वेद से उनका कोई नाता।
झूठी कहनी है गढ़ी वामन
ने गंगा नहीं देवी माता।।

जिसने जन्म दिया उनको
उसे ही द्विज ने छूत बताया।
माता कैसे है निर्मोही,
जिसने अपना दूध पिलाया।।

प्रश्न यही है मन में कोई
द्विज उत्तर बतलाए।
कैसे पूर्व जन्म के वामन
रविदास रूप में आए?

सन्त शिरोमणि गुरु रविदास
की वाणी बड़ी अनूठी।
लौटे आत्मा, जाति हो उसकी,
ये बातें हैं झूठी।।

सन्तों में है संतशिरोमणि
जिनका चर्चित नाम।
कर जोड़कर करते सूरज
गुरु को बारम्बार प्रणाम।।

- सूरजपाल
बरेली

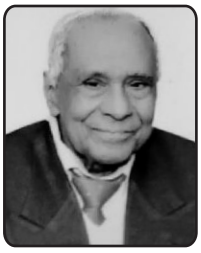

एल0एन0 सुधाकर की कविता

संत गुरु रविदास

संतप्त त्रस्त जनमानस को
नवजीवन का विश्वास दिया।
संतों में संत शिरोमणि गुरु
रविदास ने ज्ञान-प्रकाश किया।।

कर्म कसौटी परख ज्ञान की
प्रेरक जनकल्याणी है।
निर्बाध प्रवाहित निर्मल
गंगाजल सी अमुतवाणी है।।

प्रेम शांति सद्भाव एकता
मानवता नूरानी है
रविदास संत की गौरवगाथा
करुणा भरी कहानी है।।

सामाजिक समता हेतु सतत
रविदास ने पुण्य प्रयास किया।
संतों में संत शिरोमणि गुरु
रविदास ने ज्ञान-प्रकाश किया।।

दासत्व-बोध का दलितों में
गुरु ने विश्वास जगाया था।
स्वाभिमान-सम्मान से जीने
का आभास कराया था।

सामाजिक परिवर्तन का
रविदास ने चक्र चलाया था।
रविदास संत ने धर्मक्रान्ति का
निर्भय बिगुल बजाया था।।

छल प्रपंच पाखंड ढोंग का
संत ने पर्दाफाश किया।
संतों में संत शिरोमणि गुरु
रविदास ने ज्ञान-प्रकाश किया।।

वर्ण जाति विद्वेष विषमता
की अनबूझ पहेली थी।
गुरुज्ञान से प्रभावित फिर
भी कितनी ही बड़ी हवेली थीं।

अभिमानी द्विजों के कारण ही
भारी विपदाएँ झेली थीं।
झाली रानी, मीराबाई विख्यात
उन्हीं की चेली थीं।

जात्याभिमानियों ने यद्यपि
भारी गुरु का उपहास किया।
संतों में संत शिरोमणि गुरु
रविदास ने ज्ञान-प्रकाश किया।।

संपर्क-
एक्स ब्लॉक 69/3 गली नंबर 5,
सुधाकर बुक डिपो,
ब्रह्मपुरी, दिल्ली- 110053
मो.: 9582113814

रूप सिंह 'रूप' की कविता

संत शिरोमणि गुरु रविदास

जब जब मानव का मानव पर
भीषण अत्याचार हुआ।
शोषण और क्रूरता का
असहायों पर कटु वार हुआ।
जब जब भू पर व्यभिचारों ने
क़ानूनी सम्बल ओढ़े।
निरपराध भूखे नंगे बदनों
ने जब झेली कोड़े।

जब-जब मानवता मुरझायी,
घृणा भाव संचरित हुये।
तब-तब भूमि-भार हरने को
महापुरुष हैं जन्म लिये।

इसी कड़ी में प्रकट हुए थे
संत शिरोमणि गुरु रविदास।
ज्ञान खड्ग से काट कर दिया
पाखंडों का पर्दाफ़ाश।

पंद्रह औ सोलवीं सदी में
चमके बनकर सूर्य समान।

राघव दास पिताजी उनके
करमा देवी मातु सुजान।

माघ पूर्णिमा का शुभ दिन
और संवत् चौदह सौ तैंतीस।
फलित हए राघव करमा के
सारे संचित पुण्य प्रतीत।

जनपद काशी में स्थित है
गाँव सीर गोवर्धनपुर।
जहाँ एक अस्पृश्य जाति में
पैदा हुये थे संत प्रवर।

भक्ति मार्ग की निर्गुण शाखा
पकड़ चढ़े उत्तुंग शिखर।
संतों के सिरमौर बन गये
ज्ञान ध्यान में हुए प्रखर।

एक बार कुछ विप्र जनों
ने ज्ञान चुनौती दे डाली।
शास्त्रार्थ में जीत गुरू ने
पंडित पोल खोल डाली।

मीराबाई रनिवासों को छोड़
गुरू की शिष्या बन।
ले उपदेश गुरू से रानी
भक्ति भाव में हुई मगन।

फैला ज्ञानालोक विश्व में
बड़े राजा और राय।
आशीर्वाद प्राप्त करने को
झुके चरण कमलों में आय।

रविदास गुरु संत ही नहीं
मानवता के रक्षक थे।
पढ़े-लिखे साहित्यकार
सामाजिकम नब्ज परीक्षक थे।
जातिवाद और छुआछुत का
जमकर घोर विरोध किया।
ऊँच नीच के बंधन काटे
सामाजिक परिशोध किया।

सभी अंधविश्वास गुरू ने
प्रमाण देकर भग्न किये।
ज्ञान क्षेत्र में सारे पंडित
एक-एक कर नग्न किये।

ईश्वर और अध्यात्मवाद की
परिभाषा को मोड़ दिया।
भाईचारा समानता और
मानव हित से जोड़ दिया।

वेद पुराण उपनिषद स्मृतियों
को ना स्वीकार किया।
बुद्धवाद की तरह कर्म का
महत्व अंगीकार किया।

मंदिर में ईश्वर और मस्जिद
में अल्ला नहिं रहते हैं।

मन दूषित है पवित्र कर
लो ऐसा गुरुवर कहते हैं।

बेगमपुरा शहर परिकल्पित
जिसमें ग़म का नाम नहीं।
गुरु निर्मित था, शोषण उत्पीड़न
का कोई काम नहीं।

भाईचारा स्वतंत्रता समाता
और न्याय व्यवस्था थी।
भोजन वस्त्र मकान सबको था
शिक्षा और चिकित्सा थी।

प्रावधान था मानवीय
कर्तव्यों और अधिकारों का।
सुख-शांति का जीवन सबका
डर नहिं अत्याचारों का।

बेगमपुरा जगत में एक
आदर्श नगर था बहुत भला।
इसके उपबंधों को संविधान
में भी स्थान मिला।

वैज्ञानिक थी सोच, गुरू का
दृष्टिकोण ईमान भरा।
तथ्यपूर्ण रचनाएँ उनकी
मानवता का सार भरा।

फिर भी ब्राह्मणवाद पोषकों
ने प्रभाव कुछ छोड़ दिये।
गुरु के जीवन में सबने
मिल चमत्कार कुछ जोड़ दिये।

मानवता की ज्योति जला
सारे जग को सद्ज्ञान दिया।
अंत समय में महासंत ने
दुनिया से प्रस्थान किया।

संपर्क-
आगरा, उत्तर प्रदेश
मो.: 9412463888
ईमेल- rsingh1747@gmail.com

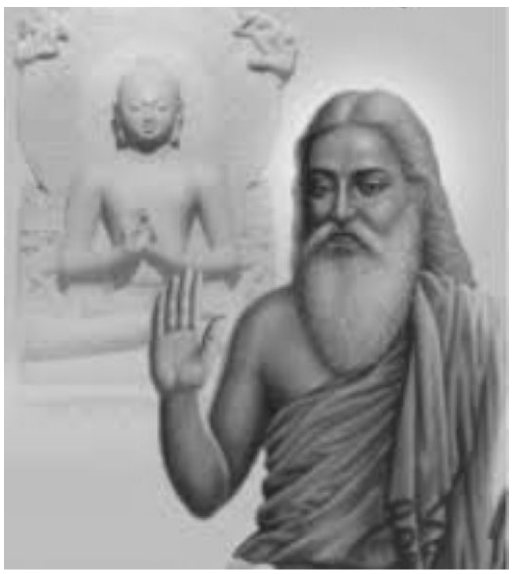

कहानी

देवचंद्र भारती 'प्रखर'
वाराणसी (उत्तर प्रदेश)
मो.: 9454199538

पुजारी

सोहन प्रसाद रोज सुबह जागने के बाद सबसे पहले अपनी माँ के पैर छूते थे। उसके बाद ही कोई दूसरा काम करते थे। उनकी आदत थी कि वे बिना स्नान किये भोजन तो दूर, नाश्ता भी नहीं करते थे। सोहन जी बुद्धपुर गाँव के निवासी थे, जो गाजीपुर और चंदौली की सीमा पर स्थित है। उनके गाँव के अंतिम छोर से सटी हुई गंगा नहीं बहती है। वे रोज गंगा में स्नान करते थे। स्नान करने के बाद वे सूर्य को नमस्कार करते थे और घर चले आते थे। घर में कम से कम दस मिनट तक संत रविदास जी के छायाचित्र के सामने बैठकर ध्यान लगाते थे और उन्हें नमन करते थे। उनके इसी विशिष्ट कर्म के कारण गाँव के लोग उन्हें 'पुजारी' कहकर पुकारा करते थे। सोहन जी के तीन पुत्र और दो पुत्रियाँ थीं। कुल आठ सदस्यों का उनका परिवार था और कमाने वाले वे अकेले थे। ईंट भट्टे पर मजदूरी करके कोई भला कमा ही कितना सकता है? रोज हाड़-तोड़ मेहनत करने के बाद भी हफ्ते में पंद्रह सौ रूपए कमाना मुश्किल था। इसलिए आर्थिक तंगी का सामना करना उनके लिए आम बात थी। फिर भी वे भक्तिभाव में इतने लीन रहते थे कि उन्हें आर्थिक अभाव का ध्यान ही नहीं रहता था। वे जितने सीधे, सरल और शांत प्रवृत्ति के थे, उनकी पत्नी उतनी ही टेढ़ी, कठिन और अशांत थीं। उनकी पत्नी के कारण उनके परिवार का माहौल कलहपूर्ण था। वे अपनी जिस माँ के रोज पैर छूते थे, उनकी सेवा करते थे, उन्हें पूजनीय समझते थे, उसी माँ से झगड़ा करना उनकी पत्नी की आदत बन गयी थी। सोहन जी इन परेशानियाँ को झेलते हुए अपने जीवन की गाड़ी को धीरे-धीरे धक्का देकर आगे बढ़ा रहे थे।

गाँवों में, गर्मी के दिनों में लोग देर रात तक जागे रहते हैं। सोहन जी की बस्ती के कई लोग रात में सार्वजनिक कुएँ के फर्श पर बिस्तर बिछाकर सोते थे। सोहन जी हर साल जेठ के महीने में रात के समय कुएँ के फर्श पर बैठकर लोगों को सारठी-बृजभार की कथा गाकर सुनाते थे। सोरढी-बृजभार की कथा कई दिनों में पूरी होती थी। कथा सुनने के इच्छुक गाँववासी रोज निश्चित समय पर कुएँ के फर्श पर इकट्ठे हो जाते थे। सोहन जी कथा की शुरूआत करते हुए गाते थे :

अरे रामे रामे रामे हो रामे, रामे जी के नईया,
अरे रामे जी के नईया हो।
रामे नइया लइहैं बेड़ा पार नु ए जी॥

सोहन जी की बस्ती में हर साल माघ-पूर्णिमा को संत रविदास जी का पूजा समारोह बड़े धूम-धाम से मनाया जाता था। वे भी 'संत रविदास पूजा समिति' के सदस्य थे। पूर्णिमा से एक दिन पहले समिति के लोग संत रविदास जी की मूर्ति लाते थे। साथ में गंगा और पंडित की भी मूर्तियाँ होती थीं। दोपहर के बाद तीनों मूर्तियाँ सगड़ी पर रखकर बैंड-बाजे के साथ नाचते-गाते हुए पूरे गाँव में घुमायी जाती थीं। पूरा

गाँव घूमने में रात के नौ-दस बज जाते थे। मूर्तियाँ घुमाने के बाद बाँस और कपड़े से बने मंदिर में उन्हें स्थापित किया जाता था। अक्सर पहली रात को बिरहा का कार्यक्रम कराया जाता था और दूसरी रात को नाच होता था। तीसरे दिन यानी पूर्णिमा बीतने के बाद मूर्ति-विसर्जन किया जाता था। जितने दिन तक मूर्ति रहती, मूर्ति के सामने धूप-अगरबत्ती जलाने और प्रसाद वितरित करने का कार्य सोहन जी के जिम्में होता था। वे सुबह-शाम जयकारा भी लगाते थे। जैसे- 'संतशिरोमणि भक्त रविदास की जय', माता कर्मा की जय', 'पिता राहु की जय', 'कमंडलधारी की जय', 'जनेऊधारी की जय' आदि। मूर्ति-विसर्जन के दिन शाम के समय समिति के सभी लोग और गाँव के कुछ इच्छुक लोग ट्रैक्टर की ट्राली पर तीनों मूर्तियों को लादकर गाते-बजाते हुए बलुआ घाट ले जाते थे। ढोलक, झाँझ और करताल के साथ सुर का संगम अत्यंत कर्णप्रिय होता था। सोहन जी भी संत रविदास जी के व्यक्तित्व से संबंधित गीत गाते थे।

भक्ति में शक्ति बा, भगत भगवान भइलें।

सोहन जी का सबसे बड़ा पुत्र कमल कुमार दशवीं पास करने के बाद घर की आर्थिक समस्याओं के कारण गाँव के अन्य लड़कों के साथ बंगलौर कमाने चला गया। दो साल के बाद वह घर लौटा, तो अपनी कमाई से बड़ी बहन का विवाह किया। कमल अपने पिता की तरह शांत और गंभीर था, लेकिन उनकी तरह वह भक्ति में रुचि नहीं रखता था। दरअसल, कमल का एक घनिष्ठ मित्र था, जिसका नाम प्रभात गौतम था। प्रभात कमल का पड़ोसी था। वह विज्ञान वर्ग से इंटरमीडिएट की पढ़ाई किया था और वैज्ञानिक चेतना से परिपूर्ण आंबेडकरवादी था। प्रभात ने डॉ0 भीमराव आंबेडकर द्वारा लिखित ग्रंथ 'बुद्ध और उनका धम्म को पढ़ा था। वह आत्मा-परमात्मा में विश्वास नहीं रखता था। वह अंधविश्वास और पाखंड का कट्टर विरोधी था। उसकी संगति में रहकर कमल भी उसी के जैसा तार्किक बन गया था। कमल और प्रभात दोनों सुबह-शाम साथ में ही टहलने जाते थे। दोनों में लंबी-लंबी बातें होती थीं। कुछ बातों पर तार्किक बहस भी होती थी। प्रभात अक्सर बातों-बातों में सोहन जी के भक्तिपूर्ण व्यवहार की आलोचना कर देता था। वह कमल को प्रामाणिक और उदाहरण सहित तर्क देकर चुप करा देता था। कमल उसकी बातों और विचारों से सहमत होकर बुद्ध और आंबेडकर को मानने लगा था। प्रभात कहता था- ''हमें भक्त नहीं, अनुयायी बनना है। भक्त का मतलब 'दास' होता है और दास का मतलब है 'गुलाम'। भक्त व्यक्ति मानसिक रूप से गुलाम होता है।''

प्रभात 'भारतीय बौद्ध महासभा' की वाराणसी शाखा के बौद्ध-आंबेडकरवादी बुद्धिजीवियों द्वारा आयोजित कार्यक्रमों में हमेशा शामिल होता था। वह कई बार सारनाथ के बुद्ध विहारों में भी गया था। वह स्नातक की पढ़ाई करते हुए कुछ समय निकालकर बुद्ध, कबीर, रविदास, ज्योतिबा फुले और डॉ. आंबेडकर आदि महापुरूषों को पढ़ता रहता था। उसने सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित संत रविदास जी के जीवन-चरित्र से संबंधित अनेक पुस्तकों का अध्ययन किया था। डॉ. विजय कुमार त्रिशरण की पुस्तक 'महाकवि रविदास और चमत्कारिक जनश्रुतियाँ को पढ़कर वह जान चुका था कि संत रविदास चमत्कारी नहीं, बल्कि क्रांतिकारी थे। स्वरूपचंद्र बौद्ध की पुस्तक 'बौद्ध विरासत के पुरोधा गुरु रविदास' को पढ़कर और उसमें वर्णित प्रामाणिक तथ्यों पर विचार करके वह मान चुका था

कि संत रविदास जी बौद्ध परंपरा के श्रमण संत थे। प्रभात ने स्नातक प्रथम वर्ष में हिंदी विषय के पाठ्यक्रम में भी संत रविदास जी के बारे में यही पढ़ा था कि संत रविदास जी मूर्तिपूजा, यज्ञ और बाह्य-आडंबर के विरोधी थे। इसलिए वह संत रविदास जी के जीवन से जुड़ी किंवदंतियों को नहीं मानता था।

प्रभात की सलाह मानकर कमल ने बंगलौर जाकर कमाने की बजाय रामनगर इंडस्ट्रियल एरिया में ही काम खोज लिया था। वह बोरा बनाने वाली एक कंपनी में सुपरवाइजर का काम करने लगा था। कमल को कंपनी में ही कमरा मिल गया था, इसलिए वह वहीं रहता था और हफ्ते में एक बार घर आता था। वह जब भी घर आता था, प्रभात से जरूर मिलता था। एक दिन दोनों मित्र मिलकर यह योजना बनाये कि सोहन जी से तार्किक प्रश्न करके संत रविदास जी से संबंधित उनके भ्रम का निवारण किया जाए। उसके बाद वे दोनों मौका मिलते ही सोहन जी से तर्क-वितर्क करने लगते थे।

माघ का महीना था। सुबह की बेला थी। सोहन जी चारपाई पर बैठे चाय पी रहे थे। कमल और प्रभात उनके बगल में दूसरी चारपाई पर बैठे हुए थे। वे अपने हिस्से की चाय पी चुके थे और चूड़ा-मटर खा रहे थे। प्रभात ने सोहन जी को संबोधित करते हुए पूछा, ''चाचा! क्या आप जानते हैं कि संत रविदास जी मूर्तिपूजा के विरोधी थे? ''सोहन जी ने कहा, ''नहीं, मैं तो नहीं जानता हूँ। प्रभात के कहा, ''इसीलिए तो आपकी समिति वाले संत रविदास जी की मूर्ति मँगाते हैं और उनकी पूजा करते हैं। जबकि संत रविदास जी की जयंती मनानी चाहिए। जयंती मनाने के लिए उनकी फोटो ही काफी है।''

सोहन जी को जयंती और फोटो की बात सुनकर बुरा लगा। वे समिति वालों के साथ तीस सालों से पूजा समारोह मनाते आये थे। उन्होंने हिंदुओं की पूजाविधि का हर तरह से पालन किया था। मालूम तो उन्हें भी था कि माघपूर्णिमा को संत रविदास जी की उन्होंने प्रभात की जयंती पड़ती है। लेकिन उन्होंने कभी यह नहीं सोचा था कि जिस तरह से डॉ. आंबेडकर जी की जयंती मनायी जाती है, उसी तरह से संत रविदास जी की भी जयंती मनायी जा सकती है। बात को हल्के में लेते हुए कहा, ''जब तक समिति में हमारी पीढ़ी के लोग हैं, तब तक तो ऐसा बिल्कुल भी नहीं हो सकता है। ''प्रभात नाराज मन से बोला, '' तो फिर आपकी पीढ़ी के लोगों को चाहिए कि वे युवा पीढ़ी को रविदास जयंती मनाने की जिम्मेदारी सौंप दें। वैसे भी आप लोगों ने अभी तक हिंदूवाद को ही ढोया है। आप लोग संत रविदास जी के साथ गंगा और पंडित की भी मूर्ति लाते हैं और उन्हें भी पूजते हैं।''

सोहन जी ने तुरंत सवाल किया, ''तो इसमें गलत क्या है? गंगा और पंडित नहीं होते, तो संत रविदास जी भी मशहूर नहीं होते।''

प्रभात ने व्यंग्यात्मक लहजे में कहा, ''अच्छा? गंगा और पंडित ने ऐसा क्या किया था?''

सोहन जी ने चिढ़ते हुए कहा, ''क्या किया था? अगर संत रविदास जी ने पंडित जी के हाथों गंगा जी के लिए दान नहीं पठाया होता, तो गंगा जी ने सोने का कंगन नहीं दिया होता। अगर गंगा जी ने सोने का कंगन नहीं दिया होता, तो पंडित जी ने वह कंगन नहीं चुराया होता। अगर पंडित जी ने सोने का कंगन नहीं चुराया होता और राजा को नहीं दिया होता, तो संसार को कैसे मालूम होता कि संत रविदास जी की भक्ति में कितनी शक्ति थी?''

सोहन जी की ये बातें सुनकर प्रभात हँसने लगा। अपनी हँसी रोकते हुए उसने कहा, ''तो आप हिंदुओं

की इस मनगढ़ंत कहानी पर विश्वास करते हैं? सबसे पहली बात तो यह कि गुरु रविदास जी एक संत थे, भक्त नहीं थे। संत और भक्त में अंतर होता है। हिंदी साहित्य में जितने भी संतकवि हुये, वे सभी निर्गुणवादी थे। जबकि सभी भक्तकवि सगुणवादी थे। हिंदी साहित्य का इतिहास लिखने वाले ब्राह्मणवादी लेखकों की यह चाल है कि उन्होंने संत रविदास जी को भक्त घोषित कर दिया है। दूसरी बात यह है कि संत रविदास जी चमत्कारी नहीं थे, बल्कि क्रांतिकारी थे।''

इतनी देर से चुप बैठा हुआ कमल भी प्रभात की बात को समर्थन देते हुए कहा, ''हाँ पापा! प्रभात सच कह रहे हैं। आप पुरानी बातें भूल जाइए। संत रविदास जी के जीवन-चरित्र पर अनेक शोधग्रंथ लिखे जा चुके हैं। कहिए, तो डॉ0 एस. के. पंजम जी की किताब 'संत रविदास - जन रविदास' खरीद कर ला दूँ। उसे पढ़िए।''

सोहन जी ने प्रभात का पक्ष भारी देखकर अपना हथियार डाल दिया। उन्होंने कमल से केवल इतना ही कहा, ''ठीक है। खरीद लाना। जरूर पढ़ूँगा।''

सोहन जी अपने जमाने में पाँचवी तक पढ़ाई किये थे। वे भले ही साक्षर थे, लेकिन आज के शिक्षित लोगों से कम समझदार नहीं थे। उन्हें अच्छी तरह पता था कि किस समय कठोर होना चाहिए और किस समय विनम्र। उनकी एक विशेषता यह भी थी कि वे अपनी गलती को स्वीकार करने में तनिक भी संकोच नहीं करते थे। अगर कोई लड़का भी सही बात बोलता था, तो वे उसके आगे झुकने में लज्जा का अनुभव बिल्कुल भी नहीं करते थे। वास्तव में, वे सही अर्थों में बुद्धिजीवी थे। दो दिन बाद ही कमल संत रविदास जी के जीवन और उनके साहित्य से संबंधित दर्जनभर किताबें लाकर रख दिया। सोहन जी रोज थोड़ा-थोड़ा समय निकालकर वे किताबें पढ़ने लगे।

उस साल रविदास जयंती मनाने के लिए जो बैनर छपवाया गया, उस पर लिखा था- 'संत रविदास जयंती समारोह'। रसीद और हैण्डविल पर भी ऐसा ही लिखा था। जयंती मनाने के लिए जो समिति बनी थी, उसमें सभी सदस्य युवा थे। समिति का अध्यक्ष प्रभात गौतम को और कमल कुमार को कोषाध्यक्ष बनाया गया था। जयंती मनाने के लिए पंद्रह दिन पहले से ही बैठक होनी शुरू हो गयी थी। हर बैठक में प्रभात और कमल युवा साथियों को वैचारिक परिवर्तन के लिए प्रेरित करते थे। परिणाम स्वरूप रविदास जयंती केवल एक दिन मनाने का निर्णय लिया गया था। प्रभात ने संत रविदास जी का चीवरधारी छायाचित्र सुंदर फ्रेम में मढ़वाया था। जयंती के दिन दोपहर में समिति के सभी सदस्य एकत्रित हुये। एक सगड़ी पर तथागत बुद्ध, संत रविदास और बाबा साहेब डॉ. भीमराव आंबेडकर के छायाचित्र को स्थापित किया गया। समिति के सदस्य और गाँववासी बैंडबाजे के साथ झूमते-नाचते हुए जयकारा लगा रहे थे। प्रभात जयकारा बोल रहा था- 'संतशिरोमणि गुरु रविदास की जय', 'माता कर्मा की जय, 'पिता रघु की जय', 'चीवरधारी की जय'। ये सब सुनकर और देखकर कुछ बुजुर्ग लोग नाक-भौं सिकोड़ रहे थे। लेकिन कुछ बुजुर्ग ऐसे भी थे, जो युवाओं के परिवर्तनकारी रूप को देखकर उनकी सराहना कर रहे थे। सराहना करने वालों में सोहन प्रसाद जी भी थे। वे गदगद थे।

रात को आठ बजे ग्राम-भ्रमण का कार्यक्रम समाप्त करके छायाचित्रों को टेंट हाउस में स्थापित किया गया। जहाँ पर तीनों महापुरूषों के छायाचित्र लगे थे, वहाँ झालरबत्ती और फूलों की सुंदर सजावट

थी। प्रभात ने पाँच मोमबत्तियों को जलाकर प्रकाशित किया। उसके बाद उसने समिति के सभी सदस्यों और वहाँ उपस्थित गाँववासियों को तथागत बुद्ध, संत रविदास और डॉ. आंबेडकर के छायाचित्रों की ओर मुख करके हाथ जोड़कर खड़ा होने के लिए कहा। जब सभी लोगों नंगे पाँव होकर उक्त मुद्रा में खड़े हो गये, तो प्रभात भी उसी मुद्रा में होकर बुद्ध वंदना, त्रिशरण और पंचशील का पाठ कराना आरंभ किया। लोग प्रभात का अनुकरण करते हुए बुद्ध-वंदना का वाचन कर रहे थे-

नमो तस्स भगवतों अरहतो सम्मा सम्बुद्धस्य।

बुद्ध-वंदना का तीन बार वाचन करने के बाद प्रभात ने त्रिशरण का वाचन करना आरंभ किया-

बुद्धं शरणं गच्छामि।

धम्मं शरणं गच्छामि।

संघं शरणं गच्छामि।

लोग प्रभात का अनुकरण करते हुए त्रिशरण का पुनर्वाचन कर रहे थे। त्रिशरण का भी तीन बार वाचन करने के बाद प्रभात ने पंचशील का वाचन किया-

पाणातिपाता वेरमणि सिक्खापदं समादियामि।

अदिन्नदाना वेरमणि सिक्खापदं समादियामि।

मुसावादा वेरमणि सिक्खापदं समादियामि।

कामेसुमिच्छाचारा वेरमणि सिक्खापदं समादियामि।

सुरामेरयमज्ज पमादट्ठाना वेरमणि सिक्खापदं समादियामि।

लोगों ने प्रभात का अनुकरण करते हुए एक-एक पंक्ति का बारी-बारी से पुनर्वाचन किया। बुद्ध-वंदना, त्रिशरण और पंचशील का वाचन कराने के बाद प्रभात ने उनका हिंदी अर्थ भी बताया। रात के दस बजे से बिरहा का कार्यक्रम आरंभ हुआ। बिरहा गाने वाले गायकों में नंदलाल रवि और विजयलाल यादव आमंत्रित थे। नंदलाल रवि ने संत रविदास जी के जीवनवृतांत से संबंधित बिरहा गाया। उन्होंने ब्राह्मणवादी षड्यंत्रों का जमकर खंडन किया। बिरहाप्रेमियों ने रातभर बिरहा का आनंद लिया। दूसरे दिन न तो बलुआ घाट जाने की जरूरत पड़ी और न ही मूर्ति-विसर्जन हुआ। क्योंकि संत रविदास जी की मूर्ति मँगायी ही नहीं गयी थी। प्रभात सभी महापुरुषों के छायाचित्रों को एक बेडशीट में लपेटकर घर ले गया और बारामदे की दीवार पर टाँग दिया।

शाम को जब सोहन प्रसाद जी से प्रभात की मुलाकात हुई, तो उन्होंने मुस्कुराते हुए कहा, ''प्रभात! मैं तुम्हारे काम से बहुत खुश हूँ। मैं तुम्हारी प्रतिभा और ज्ञान को नमन करता हूँ।'' उनकी यह बात सुनकर प्रभात कृतज्ञतापूर्वक विनम्र भाव से बोला, ''आप यह क्या कह रहे हैं चाचा? अगर मैं इस तरह का परिवर्तन कराने में सफल हो पाया हूँ, तो इसमें आपकी अहम भूमिका है। अगर आप अपनी पीढ़ी के लोगों को समझाये नहीं होते और वे लोग आपकी बात माने नहीं होते, तो ऐसा कुछ भी नहीं हो पाता। मैं खुद आपको हृदय से नमन करता हूँ।'' उसने शीश झुकाकर हाथ जोड़ लिया था। सोहन जी ने अपने आसपास देखा। कई स्त्री-पुरुष उन दोनों की ओर प्रसन्न भाव से देख रहे थे। सोहन जी का मन इतना खुश था कि वे कुछ कहने की स्थिति में नहीं थे। उनकी आँखें उनके मन के भावों को उजागर कर रही थीं। उनकी आँखों में पानी भर आया था।

पुस्तक समीक्षा

प्रोफेसर ताराराम गौतम
जोधपुर (राजस्थान)
मोबाइल- 9414295276

लोक-चेतना के दोहों का अतुलनीय संग्रह है- 'नाहर-सतसई'

रघुबीर सिंह 'नाहर' की सद्य प्रकाशित काव्य-रचना 'नाहर सतसई' सरल और सुबोध्य शब्दों में पद्यबद्ध दोहावली है, ऐसा कहें तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। हर एक पद्य चार-चरणों का एक दोहा है। ऐसे सात सौ दोहों का संग्रह यह सतसई है अर्थात् सात सौ दोहे। इन दोहों में जो संदेश है, वह बहु-आयामी व सार्वजनीन है। यह वर्तमान चेतना की प्रतिध्वनि है। इस प्रतिध्वनि या चेतना का बीज भारतीय संविधान है, जो समतामूलक समाज की स्थापना का एक कालजयी दस्तावेज है। जिसकी स्पष्ट स्वीकारोक्ति पहले ही दोहे में कर दी गयी है। जब कवि कहता है? 'संविधान ने है दिया, समता का अधिकर।' लेकिन उसके साथ ही कवि को विक्षोभ है कि अभी तक इसकी व्यावहारिक प्रतिपत्ति नहीं हो सकी है। जब वह कहता हैः 'धरती पर उतरा नहीं, बार बार धिक्कार' तो उसमें उसका दर्द और विक्षोभ झकलता है। पूरी पद्य रचना में उसी स्थापना और प्रतिपत्ति के बीच की स्थितियों को शब्दों के माध्यम से सजीव करने का सार्थक प्रयास किया गया है। कवि की चेतना में उपजे भाव पद्यबद्ध शब्दों में ध्वनित हुए है और यथार्थ को हमारे सामने रखते हैं। विविधरूपा विद्रूपता के बीच भी कवि आशान्वित है और उसका संविधान और संवैधानिक मूल्यों पर पूरा भरोसा है, जब वह कहता हैः शक्ति दिया संविधान ने, दिया मान सम्मान। सब इसका पालन करो, होगा देश महान।।683।।

विद्रूपता, विषमता, विखण्डता, गरीबी, भुखमारी और लाचारी को अभिव्यक्त करने वाले दोहों में भी ऊर्जा और जोश है, कवि निराश नहीं है। वह उनका प्रतिकार करने की प्रेरणा देता है, लेकिन बात स्पष्ट है कि वह प्रतिकार हिंसक क्रांति का आह्वान नहीं करता है, बल्कि संवैधानिक क्रांति का आह्वान करता है। यह कवि की व्यावसायिक-धर्मिता की उपज ही नहीं है, बल्कि रक्तपात और हिंसक क्रांति से परहेज भी है। जो यह संदेश देता है कि जब संवैधानिक रास्ते उपलब्ध हैं, तो हिंसक रास्ते क्यों अपनाए जाए? प्रतिकार आंबेडकरवादी लेखकों और कवियों का प्रिय आलम्बन है, परंतु इस कवि की विशेषता यह है कि वह प्रतिकार के रूप में संवैधानिक रास्तों का पक्ष लेता है। उसके लिए जन-मानस को उद्वेलित करते हुए कवि कहता हैः 'समय निकलता जा रहा, करो समय से बात। ये दिन फिर न आएँगे, काली होगी रात।' अगर समय रहते हमने प्रयत्न नहीं किये, तो भविष्य अंधकारपूर्ण होगा। ऐसा कहकर भी कवि उत्साह का संचार करता है।

विसंगतियों के धरातल पर संगति बिठाते हुए ये दोहे लोगों की ज़बान पर उसी प्रकार से रचने-बसने वाले होंगे, जैसे कबीर और रसखान के दोहे। दोहों के संयोजन में न तो शब्दों में क्लिष्टता है और न ही भावों की अभिव्यक्ति में दुरूहता है। ये लोक-

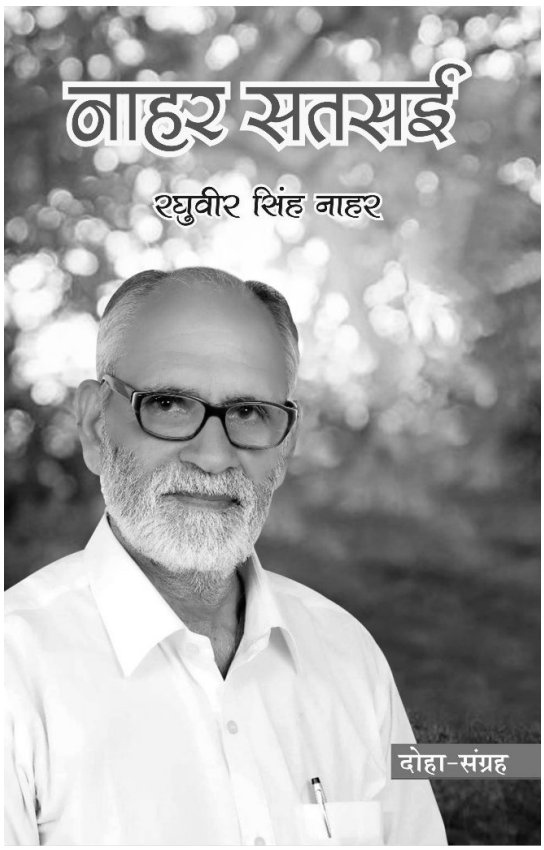

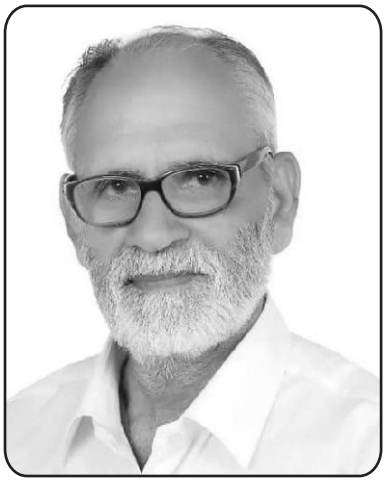

पुस्तक : नाहर सतसई (दोहा संग्रह)
रचनाकार : रघुबीर सिंह 'नाहर'
प्रकाशकः साहित्य संस्थान
गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश
पृष्ठ : 124
मूल्य : 200/-
सम्पर्क : 9968047183

चेतना के दोहे हैं, लौकिक हैं। इसलिए लोक में समादृत किये जायेंगे, ऐसी आशा की जा सकती है। परिस्थितियाँ समस्यामूलक हैं, लेकिन बोध समाधान-मूलक है। कवि इन दोहों के माध्यम से वर्तमान समाज और समाज की चेतना को झकझोरता है, संघर्ष पैदा करता है, बोध पैदा करता है। कवि की कल्पना सपनों का संसार नहीं है और न ही आदर्श की उधेड़बुन है, बल्कि यथार्थ की भित्ति पर बैठकर कवि उनका जायजा लेता है और उन्हीं शब्दों में पद्यबद्ध करता है, जो जन-जन के चेतन में है। इस अर्थ में यह रचना 'जन-चेतना' की रचना है। इसमें समाज के हर वर्ग का आईना है, नागरिक, स्त्री-पुरुष, युवा-वृद्ध, मजदूर-किसान अर्थात् साधारण जन से लेकर राजनेता और बुद्धिजीवियों, धार्मिकों तक का मंथन इन दोहों में है।

सामाजिक चेतना के साथ राजनैतिक चेतना और आध्यात्मिक उन्नति के मार्ग को दर्शाने वाले ये दोहे अलंकारपूर्ण छंदों में लयबद्ध किये गये हैं, जिसका हर कोई रसास्वादन करना चाहेगा और उन्हें

गुनगुनाते हुए आत्मसात भी करना चाहेगा। वास्तविकता से ये इतने निकट हैं कि अनायास ही बिना अवधान के भी ये स्मृति-पटल पर अंकित हो जाते हैं। पाठक उन्हें बार-बार पढ़कर उत्साहित होंगे, उसके बोर नहीं होंगे। कहने का तात्पर्य यह है कि जैसा आमतौर पर कहा जाता है कि कविता बोर करती है, लेकिन इनमें बोरियत नहीं है, बल्कि हर तरह का रस है। जिसको जो रस प्रिय है, उसे वह इन दोहों में पा सकता है। सामाजिक चेतना में कवि का आदर्श संविधान और उसके रचनाकार डॉ0 आंबेडकर हैं, ऐसा कहना ही सत्य है। यह डॉ0 आंबेडकर के अन्वेषण और बौद्ध-धर्म की प्रतिपत्तियों को बिना किसी दूसरे पर दोषारोपण करते हुए प्रतिपादन करता है। वह मार्ग उसे सुभीता लगता है, यही कारण है कि अधिकांश दोहों में जाने या अनजाने बुद्ध-दर्शन की छाप झलक जाती है।

इन दोहों में मुख्यतः सामाजिक न्याय की भावना को उत्तेजित करना इसका सौन्दर्य है। प्रकृति का निरूपण और सामाजिक विद्रूपता का चित्रण बेजोड़ हैः आसमान में बन रही, लंबी एक कतार। शाम ढले घर आ रहे, उमड़ रहा है प्यार ।।86।। घास फूस की झोपड़ी, सावन की बरसात। दुखियारी बैठी रही, टपकी सारी रात।।108।। ढलता सूरज कह रहा, देख समय की चाल। मैं बौराया था यहाँ, देखो मेरा हाल।।283।। देखी खिलती फुलझड़ी, हँसने लगा अनार। छम-छम, छम-छम हो रही, आने लगी बाहर।।389।। साहित्य-मर्मज्ञ विविधरूपा सौंदर्य को इन दोहों में पा सकते हैं।

दोहों में आम बोलचाल की भाषा के ही शब्द प्रयुक्त हुए है। इसमें शब्दाडंबर का तनिक भी आवरण नहीं है। शब्द भाषा की शक्ति होते हैं। शब्द ही अर्थ देते है। शब्दों से पद बनते हैं। वे पद अपने में अर्थ-सामर्थ्य को सँजोए हुए होते हैं, इसीलिए काव्य में शब्द को 'पदार्थ' कहा गया है। शब्द और अर्थ विशेष ही काव्य होता है। कवि रघुबीर सिंह 'नाहर' ने इस कृति में विशेष-विशेष शब्दों का चयन कर उम्दा 'पदार्थों की रचना की है या यह कहें कि इस दोहा-संग्रह 'नाहर सतसई' काव्य की रचना की है। शब्द की 'अर्थ-बोधन क्षमता' को अभिधा, लक्षणा और व्यंजना के रूप में तीन प्रकारों में जाना जाता है। किसी भी शब्द रचना के संसार को इन्हीं तीन कसौटियों पर परखा जाता है।

'नाहर सतसई' काव्य में ये तीनों प्रकार देखने को मिलते है, लेकिन पूरे काव्य में 'अभिधा' की प्रधानता है। बहुधा इस काव्य में प्रयुक्त शब्द अपने स्वाभाविक अर्थात् साधारण बोलचाल में प्रसिद्ध अर्थ को बताते हैं, यथाः 'पग-पग पर काँटे बिछे, करते जाओ पर। करो जुल्म का सामना कभी न मानो हार ।।2।। 'कभी न भूलो रास्ता, न भूलो पैगाम।।39।।' 'कोयल हरदम बोलती, बोल बड़े अनमोल।।200।। 'दोष देखना छोड़ दो, करो गुणों की बात।।380।।' भूखों को भोजन नहीं, कब प्यासों को नीर।।400।।' 'दीपक जलकर बुझ गया, खत्म हो गया तेल।।472।।' 'पाँच साल में एक दफा, आते मेरे गाँव।।506।।' 'बरगद, पीपल, खेजड़ी; हैं वर्षा के दूत ।।584।।' 'शक्ति दिया संविधान ने, दिया मान सम्मान।।683।।' इन सब पदों में प्रयुक्त शब्द साधारण अर्थ को बताने वाले हैं। यह इसकी विशेषता है। इस विशेषता में सरलता है और सहजता होने से काव्य शीघ्र ही बोधगम्य हो जाता है। इस अर्थ में 'नाहर सतसई' जन-मानस की कृति है। साधारण से साधारण व्यक्ति

भी काव्य के पदों के अर्थ को समझ सकता है। इसमें काव्य-रस का आनंद निर्बाध है। इसको समझने के लिए किसी शास्त्र की शरण में जाने की जरूरत नहीं है, न ही किसी शब्द-कोश की सहायता लेने की जरूरत होती है। वह प्रवाहमय है, शब्द उसके अपने संसार के हैं। अगर यह कहा जाए कि अभिधा ही 'नाहर सतसई' की शक्ति है, तो यह सत्य से परे नहीं होगी।

ऐसा नहीं है कि यह पूरा काव्य अभिधा में ही रचा गया है। इस सतसई में कई पद और कई पदों के शब्द ऐसे हैं, जो अपने वाच्य अर्थ को न बताकर वाच्य के साथ संबंध रखने वाले अर्थ को भी बताते हैं। उनका एक लक्षित अर्थ है। वे निश्चित रूप से लक्षक हैं या कहें कि शब्दों की लक्षणा-शक्ति को अभिव्यक्ति देने में भी कवि ने कोई कमी नहीं छोड़ी है। कई पदों में कवि का तात्पर्य शब्दों के वाच्य अर्थ नहीं हैं, बल्कि उनका कोई विशेष प्रयोजन है और यह विशेष प्रयोजन ही कविता में लक्षणा शक्ति को पैदा करता है, जैसेः 'बड़ा कठिन है समझना, बहेलियों की चाल।।129।।' सूखे पत्ते उड़ गये, चले गए किस ओर ।।215।।' 'घूम रहे थे भेड़िये, देखा आधी रात।।243।।' 'धोखे के बाजार में, होता एक ही काम। चोला उजला पहनकर नित्य छलकाए जाम।।437।।' आदि में कवि का मंतव्य इन शब्दों का वाच्य अर्थ बताने में नहीं है, बल्कि ये शब्द लक्षणा में प्रयुक्त हुए है। इस प्रकार से इस काव्य में अभिधा और लक्षणा दोनों ही विधाओं का प्रयोग मिलता है, साथ ही खोजने पर अभिधामूलक और लक्षणामूलक व्यंजना भी मिल जाती है। अनेकार्थ शब्दों के प्रयोग में कवि का अभिप्राय जहाँ एक विशेष अर्थ से हो और वहाँ अगर दूसरा भी अर्थ व्यंजित होता है, तो वह अभिधामूलक व्यंजना है और जहाँ लक्षणा की सहायता से व्यंजना की प्रतीति हो, वहाँ वह लक्षणामूलक व्यंजना है। व्यंजना भावों को प्रकट करती है। कवि ने अपनी इन कविताओं में रति, शोक, हास, क्रोध, उत्साह, भय, जुगप्सा, विस्मय और निर्वेद के भावों को जगह-जगह उभार दिया है। 'नाहर सतसई' में अलंकारों का भी प्रयोग विचारणीय है। अलंकार शब्द और अर्थ की शोभा है। अलंकार कविता की शोभा बढ़ा देते हैं। सतसई में अधिकांशतः अनुप्रास अलंकार का प्रयोग किया गया है।

हिंदी साहित्य और विशेषकर आंबेडकरवादी साहित्य में रघुबीर सिंह 'नाहर' का यह योगदान अतुलनीय है। आलेख-लेखन, कथा-कहानी और आत्मकथाओं के बाद आंबेडकवादी लेखन में पद्य-रचनाओं में यह दोहा-संग्रह अपना एक विशिष्ट स्थान बनाएगा, ऐसी आशा की जा सकती है। ऐसी कृतियों में छोटी-छोटी गोष्ठियों में चर्चा करके उनके महत्व को उजागर किया जाना चाहिए। जिससे नवोदित लेखकों को पद्य-साहित्य निबंधन का प्रोत्साहन मिल सके।

रिपोर्ट

राजस्थान के मंत्री टीकाराम जूली ने 'नाहर-सतसई' का ऑनलाइन किया विमोचन।

दोहाकार व साहित्यकार अधिवक्ता रघुवीर सिंह 'नाहर' जी की दूसरी पुस्तक 'नाहर-सतसई' का विमोचन न्याय व अधिकारिता मंत्री टीकाराम जूली ने गूगल मीट पर ऑनलाइन किया। नाहर-सतसई का विमोचन कार्यक्रम 'ग्लोबल ऑर्गनाजेशन ऑफ आंबेडकराइज्ड लिटरेटियर्स' (G.O.A.L) के तत्त्वाधान में गूगल मीट पर हुआ, जिसका संचालन साहित्यकार भूपसिंह भारती ने किया। विमोचन कार्यक्रम 15 जनवरी को सायं 4 बजे से ऑनलाइन हुआ, जिसमें 'नाहर-सतसई' का विमोचन मुख्यातिथि के रूप में श्रद्धेय टीकाराम जूली (कैबिनेट मंत्री, राजस्थान सरकार) ने किया। विमोचन कार्यक्रम की अध्यक्षता श्रद्धेय डॉ0 राममनोहर राव (अध्यक्ष G.O.A.L) ने की।

कार्यक्रम में मुख्य वक्ता के रूप में बोलते हुए श्रद्धेय डॉ0 दामोदर मोरे ने कहा कि 'नाहर सतसई के दोहों में मानव प्रेम, न्याय, समता की बात कही गई है और ये दोहे मानवीय मूल्यों की हिफाजत करते हैं। 'नाहर-सतसई' कवि रघुवीर सिंह 'नाहर' को आंबेडकरवादी कवियों की श्रेणी में लाने में सफल रही है। श्रद्धेय देवचन्द्र भारती 'प्रखर', जिन्होंने नाहर-सतसई की भूमिका भी लिखी है, वो विमोचन कार्यक्रम में विशिष्ट वक्ता रहे। प्रखर जी ने कहा कि नाहर सतसई में संकलित दोहे सारगर्भित हैं और पर्यावरण, शिक्षा, विज्ञान, सदाचार, परिवार, समाज, शासन-प्रशासन पर कटाक्ष, सामाजिक कुरीतियों पर चोट करते हैं। गुजरात से डॉ0 माणिक मृगेश, जिन्होंने नाहर-सतसई की फ्लैप टिप्पणी लिखी है, ने बोलते हुए कहा कि नाहर-सतसई में 'नाहर' जी ने हर बात को, हर तथ्य को सप्रमाण व सतर्क प्रस्तुत किया है, इसलिए दोहे बेजोड़ व विश्वसनीय बन पड़े हैं। लखनऊ से साहित्यकार एस. एन. प्रसाद, जिन्होंने नाहर-सतसई की फ्लैप टिप्पणी लिखी है, ने बोलते हुए कहा कि 'नाहर' जी द्वारा लिखित दोहे बहुआयामी एवं सर्वजनीन हैं। सतसई के दोहों ने धर्म, दर्शन, राजनीति, समाज में व्याप्त आडम्बर, अंधविश्वास, भेदभाव जैसी विसंगतियों पर तीखा प्रहार किया है।

अपने अध्यक्षीय भाषण में डॉ0 राम मनोहर राव ने बोलते हुए कहा कि नाहर-सतसई में संकलित दोहों ने जीवन के हर आयाम को छुआ है, उन्होंने अपने दोहों में अपने जीवन के तमाम अनुभवों को पाठकों के लिए परोसा है तथा इनके दोहों में आंबेडकरवादी चेतना कूट-कूटकर भरी है। मंच संचालन करते हुए भूपसिंह भारती ने कहा कि नाहर सतसई के दोहे गैर-बराबरी के विरूद्ध आवाज उठाते हैं, सामाजिक एकता की बात करते हैं। मुझे यकीन है कि यह पुस्तक पाठकों को सही राह दिखाएगी। आईएएस ओ.पी. बुनकर ने भी नाहर साहब की रचनाधर्मिता की तारीफ करते हुए कहा कि इनकी रचनाओं में भाव और प्रवाह के शानदार दर्शन होते हैं।

अंत में सेवानिवृत्त तहसीलदार लालाराम नाहर ने विमोचन कार्यक्रम में शिरकत करने वाले सभी साहित्यकारों, प्रबुद्धजनों का नाहर परिवार की ओर से हार्दिक आभार जताया। अलवर से डॉ0 महेश गोठवाल ने विमोचन कार्यक्रम को यूट्यूब पर लाइव किया तथा नारनौल से गिरीश नाहर ने कार्यक्रम की रिकॉर्डिंग की।

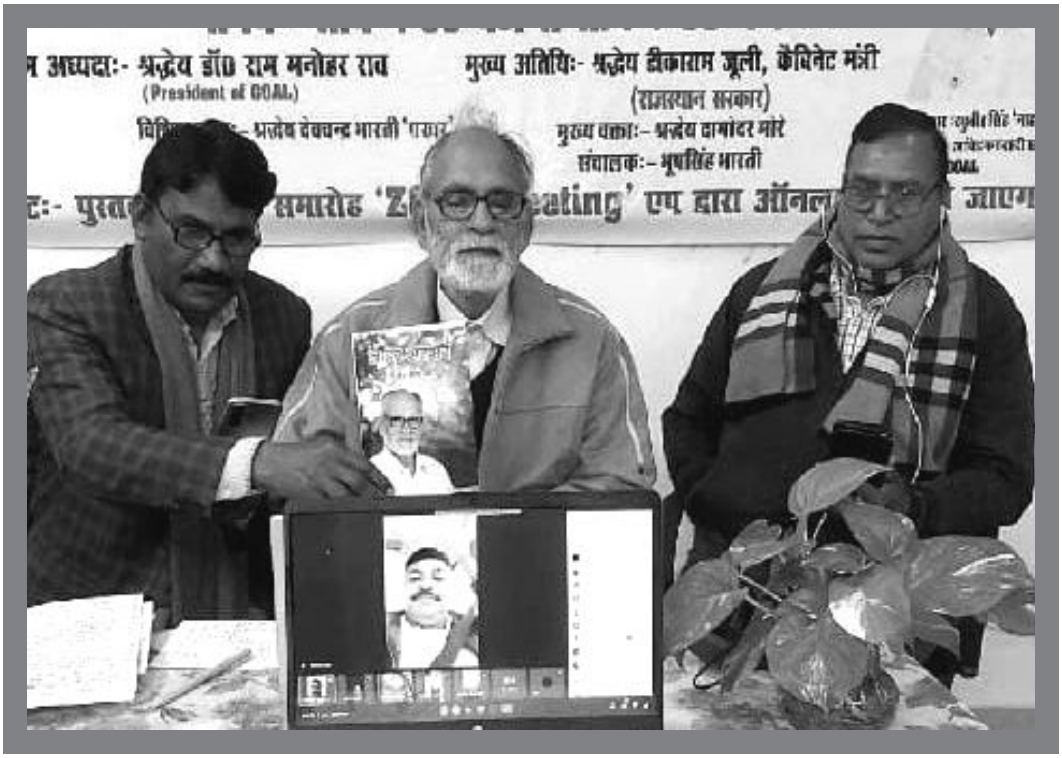

कार्यक्रम के संचालक भूपसिंह 'भारती' ने बताया कि विमोचन कार्यक्रम में जयपुर से कहानीकार रत्नकुमार सांभरिया, बरेली से साहित्यकार श्यामलाल राही, डॉ0 बीआर बुद्धप्रिय, महाराष्ट्र से मा. ना. नायकवाड़, डॉ0 शिवताज 'ताज', गुरुदयाल नाहर, सुरेश उजाला, डॉ0 नविला सत्यादास, डॉ0 मुकुंद रविदास, अमित कुमार बौद्ध, राजस्थान से बलबीरसिंह गोठवाल, बीकानेर से मनराज कांटीवाल, आराधना बौद्ध, आशीष कुमार, अनिल सुरेला, चंडीगढ़ से जे.पी. नाहर, महावीर नाहर, सुंदरलाल उत्सुक, डॉ0 महीपाल सिंह, डॉ0 सुशील कुमार शीलू, रणधीर सिंह धीरू, जयसिंह जय, सविता, रेखा चौहान, दिवांशु बल्ड़ोदिया, क्षेत्रीय साहित्यकारों व प्रबुद्धजनों के साथ-साथ देश के जाने-माने आंबेडकरवादी साहित्यकार जुड़े।

रिपोर्ट

गुरु विश्राम वृद्ध-आश्रम
बेसहारा, लाचार बुजुर्गों का अपना घर

संचालक : संत हरदयाल एजुकेशनल एण्ड आरफस वेलफेयर सोयायटी

गुरुविश्राम वृद्ध आश्रम के संस्थापक संत विश्राम 'मानव' जी का जन्म वाराणसी से लगभग 30 किलोमीटर दूर केशवपुर गाँव में सन् 1922 ई0 में हुआ। आप बचपन से ही महान संत हरदयाय साहेब (गाजीपुर) के आशीर्वाद से साधना के मार्ग पर चलते रहे और बड़े होकर रेलवे में नौकरी करने लगे। आप हमेशा गरीब व दीन-दुखी की मदद करते रहे और अभी भी आप दया की मूर्ति हैं।

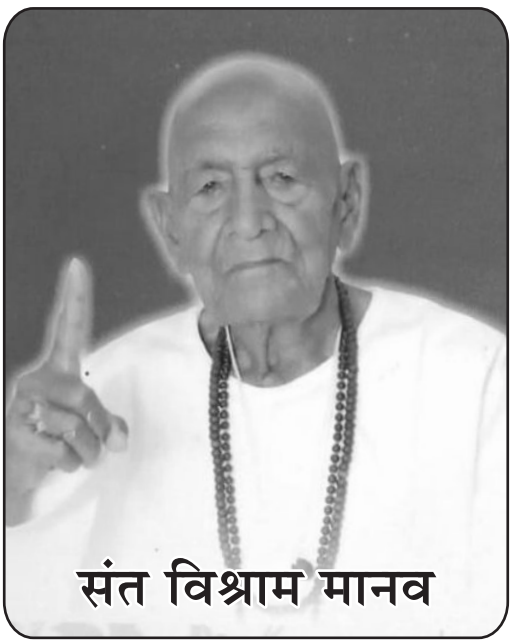

अपने गुरु की सेवा करते हुए आपने एक महान कवि एवं भजन गायक के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त की है। आज भी 95 वर्ष की आयु में अपना नित्य क्रिया-कर्म, साधना सत्संग नियमित रूप से करते हैं।

आपके आशीर्वाद से आज बेसहारा लाचार बेघर, बीमार वृद्धों की सेवा ''गुरु विश्राम वृद्ध-आश्रम नई दिल्ली'' एवं ''गुरु विश्राम वृद्ध-आश्रम गढ़मुक्तेश्वर उत्तर प्रदेश'' में हो रही है। आपके मार्गदर्शन एवं आशीर्वाद से प्रतिदिन लगभग 400 वृद्धजनों को मुफ्त भोजन, वस्त्र,

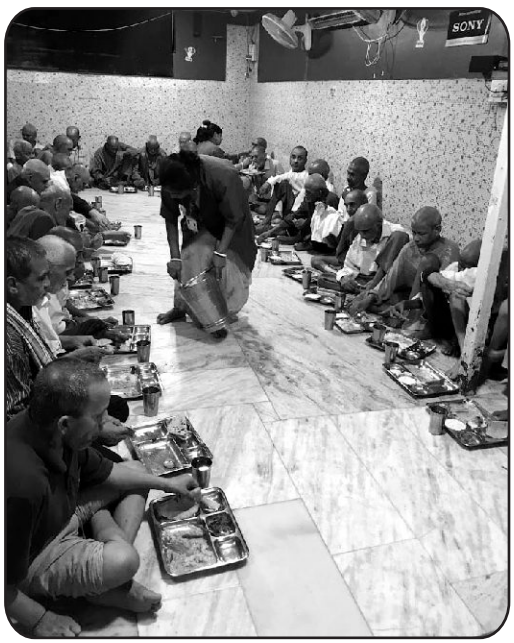

इलाज प्रदान किया जाता है और उनकी देखभाल की जाती है। दोनों वृद्ध-आश्रमों का नाम आपके नाम पर रखा गया है एवं संस्थान का नाम आपके

गुरु परम श्रद्धेय संत हरदयाल साहेब के नाम पर रखा गया है।

'गुरु विश्राम वृद्ध-आश्रम' का नाम अपने देश एवं विदेशों में प्रसिद्ध है। यहाँ पर जिस तरह बेसहारा, लाचार, बीमार वृद्धों को सड़क से लाकर देखभाल एवं सेवा की जाती है, वह अपने आप में अद्वितीय है।

आश्रम-1 गौतमपुरी फेस-1, नियर आयुर्वेद हॉस्पिटल, सरिता बिहार, नई दिल्ली।

आश्रम-2 लठीरा, जे.पी. नगर, गढ़मुक्तेश्वर, उत्तर प्रदेश।

मो.: 9953750017, 8588888999

ईमेल : vridhashram@oldagehomeindia.in

वेबसाइट : www.oldagehomeindia.in, www.sheows.org

'आंबेडकरवादी साहित्य' पत्रिका के मंडल प्रतिनिधिगण

रुपचंद गौतम, दिल्ली, 9868414275
कर्मशील भारती, दिल्ली, 9968297866
विजय छाण, राजस्थान, 9983272626
प्रह्लाद मीणा, राजस्थान, 9982553620
विनोद कुमार, वाराणसी, उत्तर प्रदेश, 8765275887
प्रबुद्धनारायण बौद्ध, चन्दौली, उ.प्र., 9005441713
विजय कुमार, चन्दौली, उ.प्र., 9198371768
सूर्यमल बौद्ध, गाजीपुर, उ.प्र., 9919047757
नीरज कुमार नेचुरल, जौनपुर, उ.प्र., 8318543949
मुन्ना कुमार, जौनपुर, उ.प्र., 7075751143
विरेन्द्र सिंह दिवाकर, हरदोई उ.प्र., 8765076843
अमित कुमार बौद्ध, रामपुर, उ.प्र., 7983836622
लोकेश आजाद, इटावा, उ.प्र., 8847398166
पप्पूराम सहाय, झाँसी, उ.प्र., 6393572259

आगामी अंक

अप्रैल-जून 2022

(अस्पृश्यता, जातिगत भेदभाव, बौद्ध धम्म और डॉ0 आंबेडकर)

उक्त विषय से सम्बन्धित आलेख, कविता, गीत, गजल, कहानी, नाटक आदि आमंत्रित हैं।

'आंबेडकरवादी साहित्य' पत्रिका की सदस्यता हेतु विवरण

सदस्यता शुल्क :

वार्षिक : 350/-
त्रैवार्षिक : 1000/-
द्विवार्षिक : 650/-
आजीवन : 7000/-

भुगतान विकल्प :

Bank Account Number : 35332395763
Account Holder : Devachandra Bharati
Bank Name : STATE BANK OF INDIA
IFSC Code : SBIN0012302
paytm PhonePe G Pay : 9454199538

GOAL द्वारा "महाड जल सत्याग्रह दिवस" पर कवि-सम्मेलन का आयोजन

GOAL के तत्वाधान में 20 मार्च, 2022 को 'महाड जल सत्याग्रह दिवस' के उपलक्ष्य में गूगल मीट पर सायं तीन बजे से सायं साढ़े पाँच बजे तक ऑनलाइन कविगोष्ठी का आयोजन मान्यवर मनोहरलाल प्रेमी (लखनऊ) की अध्यक्षता में हुआ। कविगोष्ठी का मंच संचालन करते हुए कवि भूपसिंह भारती (नारनौल) ने 20 मार्च सन् 1927 को डॉ0 भीमराव आंबेडकर द्वारा किये गये महाड जल सत्याग्रह के बारे में बताया तथा पटल से जुड़े साहित्यकारों ने डॉ0 आंबेडकर द्वारा किये गये जल सत्याग्रह को अपनी कविताओं के द्वारा अभिव्यक्ति दी। अलवर से जुड़े साहित्यकार आर0 एस0 नाहर ने अपनी रचना "अब कौन बचाने आएगा, घनघोर घुप्प अंधियारों से" सुनाकर खूब रँग जमाया। प्रयागराज से कवि राधेश विकास ने "जो पी रहे बिसलरी का पानी, वो भी भूल रहे, चुल्लू का पानी" कविता सुनाकर महाड जल सत्याग्रह को याद किया। वाराणसी से GOAL के संस्थापक कवि देवचंद्र भारती 'प्रखर' ने अपनी रचना 'बीस मार्च का दिवस, छपा इतिहास पृष्ठ पर, किये लोकहित आज, महामानव आंबेडकर' गाकर खूब तालियाँ बटोरी। लखनऊ से कवि शिवनाथ प्रसाद ने महाड जल सत्याग्रह पर अपनी ग़ज़ल सुनाकर सबको मुग्ध कर दिया। बरेली से डॉ0 राम मनोहर राव ने अपनी ग़ज़ल 'आंदोलन में आंबेडकर संग उमड़ा जन सैलाब, पानी ले सकें अस्पृश्य भी कुआँ नदी तालाब' सुनाकर शमा बाँध दिया। नारनौल से साहित्यकार भूपसिंह भारती ने हरियाणवी बोल्ली में स्वरचित रागनी "सदियों सैं ये वंचित मानस पाणी नैं तरसे भाई, भीमराव नैं पीने खातिर पाणी की लड़ी लड़ाई" गाकर खूब रँग जमाया। वरिष्ठ साहित्यकार श्यामलाल राही ने अपनी ग़ज़ल 'आँसू जिसे कहते हैं, वह आँखों का पानी है, रिश्तों की नुमाइश है, जख्मों की निशानी है' गाकर सुनाई। कविगोष्ठी की अध्यक्षता कर रहे GOAL के उपाध्यक्ष मनोहरलाल प्रेमी ने अपनी गजल 'पानी दलितों को वह भी था दुर्लभ यहाँ, प्यासे मरते न पानी का हक था यहाँ" गाकर सुनाई। कविगोष्ठी में डॉ0 महीपाल सिंह, गुरदयाल सिंह नाहर, जयसिंह 'जय' आदि जुड़े/

संतशिरोमणि गुरु रविदास जयन्ती पर हुआ ऑनलाइन कविगोष्ठी का आयोजन

संत शिरोमणि गुरु रविदास जी की जयंती के सुअवसर पर 'ग्लोबल ऑर्गेनाइजेशन आफ आंबेडकराइज्ड लिटरेटिअर्स' (GOAL) के तत्वाधान में ऑनलाइन कविगोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसकी अध्यक्षता गोल (GOAL) के अध्यक्ष श्रद्धेय डॉ0 राम मनोहर राव ने की तथा कवि गोष्ठी का संचालन जौनपुर (यूपी) के श्रद्धेय नीरज कुमार 'नेचुरल' ने किया। कवि गोष्ठी का आरंभ बुद्ध वंदना से हुआ। अलवर (राजस्थान) से कवि रघुवीर सिंह 'नाहर' ने गुरु महिमा पर दोहे सुनाए और गुरु रविदास पर कुंडलिया सुनाई। नारनौल (हरियाणा) से कवि भूपसिंह भारती ने अपनी शैली में गुरु रविदास पर हरियाणवी बोल्ली में 'हो, हो गुरु की गाथा जग गाये, सन्तों में जो शिरोमणि गुरु रविदास कहलाये' रागनी गाकर खूब तालियां बटोरी। गोल (GOAL) के सचिव देवचन्द्र भारती प्रखर ने रविदास पचासा 'जय रविदास आस के दानी, जय गुरुवर जय हो वरदानी' लय में गाकर सबका भरपूर मनोरंजन किया। लखनऊ से एस0एन0 प्रसाद ने गजल का गायन किया। गोल (GOAL) के उपाध्यक्ष मनोहर लाल प्रेमी ने भी अपनी रचना पढ़कर सुनाई। पटियाला (पंजाब) से डॉ0 नविला सत्यादास ने भी अपनी अभिव्यक्ति से खूब तालियां बटोरी। कवि गोष्ठी की अध्यक्षता कर रहे वरिष्ठ साहित्यकार डॉ राम मनोहर राव ने गुरु रविदास की शिक्षाओं को अपनी गजल 'सन्त शिरोमणि रविदास रहे निर्गुण और निराकार' गाकर सुनाई। श्रद्धेय श्याम लाल राही 'प्रियदर्शी' ने भी गजलें सुनाकर सबका खूब मनोरंजन किया। कवि रूप सिंह रूप, श्रद्धेय सूरजपाल और कुमारी आराधना बौद्ध आदि कवियो / कवयित्रियों ने काव्यपाठ किया। सभी रचनाकारों ने गुरु रविदास जी के जीवनचरित्र, उनके व्यक्तित्व व कृतित्व और उनके दर्शन से संबंधित अपनी एक-एक कविता प्रस्तुत की तथा समसामयिक कविताओं का भी सस्वर वाचन किया।